योगविद्या

वर्ष 8 अंक 6
जून 2019
सदस्यता डाकखर्च – रु 100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2019

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 58 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो : होली साधना एवं उत्सव, गंगा दर्शन विश्व योगपीठ 2019

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

थोड़ा-सा आराम करो

किसी दवा से अपनी नींद की अवधि को कम नहीं करना चाहिए। इससे तुम्हारे शरीर और मन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। निद्रा के माध्यम से शरीर को पर्याप्त विश्राम मिलना चाहिए। जब तुम निरंतर रूप से गहन ध्यान में प्रवेश करोगे तो तुम्हारे मन और शरीर को अत्यन्त विश्रान्ति मिलेगी। तब निद्रा की आवश्यकता अपने आप ही कम हो जाएगी और स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर भी नहीं पड़ेगा।

निद्रा को धीरे-धीरे तथा सतर्कता के साथ घटाना चाहिए। एक महीने के लिए 9.30 बजे सो जाओ और सबेरे 4 बजे जग जाओ। एक महीने बाद 10 बजे शयन करो और सुबह 3.30 बजे जागो। पुनः एक माह पश्चात् 10.30 बजे सोना चाहिए और 3 बजे जागना चाहिए। इस तरह धीरे-धीरे तुम अपनी निद्रा की अवधि को घटाते जा सकते हो। साथ ही दिन में सोने से परहेज करो।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 8 अंक 6 जून 2019
(प्रकाशन का 57 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 वैराग्य की महिमा
6 कीर्तन और दान
13 अनासक्ति योग
20 विचार-संयम तथा विचार-शून्यता
25 सत्यम् वाणी
44 योगनिद्रा का चेतना पर सूक्ष्म प्रभाव
47 अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018 के संस्मरण
51 योग कैप्सूल के अनुभव

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

वैराग्य की महिमा

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

यह सम्पूर्ण जगत् मेरे लिए अग्नि की गेंद के समान है। यह सम्पूर्ण जगत् मुझे एक बड़ी भट्ठी के समान प्रतीत होता है, जिसमें सभी जीवित प्राणी भूने जा रहे हैं। जब आप मृत्यु के निकट होंगे, तब क्या आपके पुत्र, पुत्री, मित्र अथवा सम्बन्धी आपकी सहायता करेंगे?

क्या आपको इस संसार में एक भी सच्चा नि:स्वार्थ मित्र प्राप्त हुआ? यहाँ पर कहीं भी शुद्ध प्रेम नहीं है। लेकिन वह ईश्वर जो आपके मित्रों के मित्र, अभिभावकों के अभिभावक हैं, जो आपके हृदय में निवास करते हैं, वे आपको कभी नहीं भूलेंगे, चाहे आप उन्हें भूल जायें। उन देवों के देव की, उन ईश्वरों के ईश्वर की एकान्त में पूजा करें। वे आपको अपने प्रेम, ज्ञान, शक्ति और शान्ति का वरदान दें।

इस संसार में प्रत्येक चीज अवास्तविक है, इसलिए प्रेम और आदर को विष की भाँति समझें। निरपेक्ष रहें। निग्रही तथा मौन रहें। अन्य लोगों के साथ घुलना-मिलना छोड़ दें। अकेले रहें और अपने हृदय में आत्मिक आनन्द का अनुभव करें। जब आप आत्मा में निवास करेंगे तब आपको किसी के साथ या सहारे की आवश्यकता नहीं होगी।

आपको सांसारिक वस्तुओं के प्रति पूर्ण वैराग्य होना चाहिए। सभी भौतिक वस्तुओं तथा इन्द्रिय-जनित आनन्दों को विष, धूल तथा तृण की भाँति जानें। मन को उनसे वापस खींच लें। ऐसा करने पर ही आपको ज्ञान प्राप्त होगा।

इस मायावी जीवन को त्याग दें। निर्भय बनें। वैराग्य में शरण लें। सभी भय द्रवीभूत हो जायेंगे। प्रभु के चरणों से जा लगें। अविभाज्य, अदृश्य, अज्ञात आत्मा में दृढ़ रहें। पति-पत्नी, घर-सम्पत्ति, बच्चों और विषयों के प्रति अविवेकपूर्ण आसक्ति से आप अपनी वास्तविक दैवी प्रकृति के बारे में सब-कुछ भूल गये हैं। आप नास्तिक बन गये हैं। पत्नी, बच्चे तथा धन आपके ईश्वर बन गये हैं, जबकि वास्तव में वे आपके शत्रु हैं।

यदि आप प्रबल वैराग्य का विकास करें, यदि आप अपनी इन्द्रियों को वश में कर लें और इस निरर्थक संसार के सभी आनन्दों तथा सुखों को त्याग दें, क्योंकि इनके साथ दु:ख, पाप, भय, प्रलोभन, कष्ट, रोग, वृद्धावस्था तथा मृत्यु मिश्रित है, तो वास्तव में आपको कोई भी चीज प्रलोभित नहीं कर सकेगी। आप सभी प्रलोभनों से रहित हो जायेंगे। आपके पास अनन्त शान्ति तथा आनन्द होगा। सांसारिक वस्तुओं के प्रति आपको कोई आकर्षण नहीं होगा। वासना तब आपके पास भी नहीं फटकेगी।

यदि आप वास्तव में ईश्वर और ईश्वर को ही चाहते हैं तो इस संसार को निर्दयतापूर्वक ठोकर मार दें। बस, बस! आपकी चाय-कॉफी बहुत हुई, बहुत हुआ आपका सोडा-लेमोनेड, बहुत हुए माता, पिता, पुत्र, पुत्री, भाई, बहन और सम्बन्धी। आपके भूतकाल में अनगिनत माता, पिता, पत्नी और बच्चे हुए हैं। आप अकेले आये हैं और अकेले जायेंगे। कोई भी आपके साथ नहीं है। आपके कर्म ही मात्र आपकी रक्षा करेंगे। भगवद्-साक्षात्कार करें। सभी कष्ट समाप्त हो जायेंगे।

वह जो पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री एवं संसार के विषयों से अविवेकी रूप से चिपका हुआ है, उसे अपनी दैवी प्रकृति को भूल जाने के अलावा और कोई चारा नहीं है। ऐसे सांसारिक मन वाले लोगों का संग स्त्री-संग की भाँति ही जिज्ञासु के लिए खतरनाक है। सांसारिक व्यक्ति सोचते हैं कि वे बहुत प्रसन्न हैं क्योंकि उनके पास थोड़े बिस्किट, थोड़ा धन और एक स्त्री है। अरे, यदि वे अमरता का मधु एक बार चख लें, तो उन्हें जिस खुशी का अनुभव होगा उसकी क्या सीमा होगी, कहा नहीं जा सकता।

प्रिय मित्र! जिस प्रकार भूतकाल आपके लिए अब एक सपना हो गया है, तब आप इस बात पर क्यों नहीं विश्वास करते कि वर्तमान भी निकट भविष्य में स्वप्न ही हो जायेगा।

सभी सांसारिक सुख आरम्भ में अमृत प्रतीत होते हैं, लेकिन अन्त में मारक विष बन जाते हैं। यह संसार दो दिन का मेला है और शरीर मात्र दो पल का है। यहाँ तक कि यदि आप सम्पूर्ण संसार के सम्राट् भी बन जायें तो भी आप सच्चे आनन्द और शान्ति का अनुभव नहीं कर पायेंगे।

धरती पर मनुष्य का जीवन और कुछ नहीं, प्रलोभनों तथा दु:खों का अंतहीन सिलसिला है। आप इस परिवर्तनशील जगत् में चारों ओर से बँधे हुए हैं तथा विभिन्न परिस्थितियों में चक्कर लगा रहे हैं। आप भ्रमित होकर इधर-उधर भटक रहे हैं तथा दु:खों-कष्टों से सदा प्रभावित हैं। लेकिन जिनके भीतर सच्चा वैराग्य है, जिनकी विवेक-शक्ति प्रबल है, वे सांसारिक वस्तुओं और माया से शीघ्र प्रलोभित नहीं होते।

कीर्तन और दान

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

कीर्तन करते समय तुम लोगों को अच्छा लगता है न? अच्छा क्यों लगता है? इसलिए कि उस समय तुम आत्मा के नज़दीक होते हो। जब तुम प्रकाश के नज़दीक होते हो तो उजाला रहता है और जैसे-जैसे प्रकाश से दूर जाते हो, अन्धेरा बढ़ता जाता है, कुछ नहीं दिखता। वैसे ही कीर्तन करने से तुमको जो आनन्द आता है, वह सिद्ध करता है कि कीर्तन करते समय तुम आत्मा के बहुत नज़दीक हो। रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में भी इसका स्पष्ट संकेत है। तुलसीदास जी कहते हैं कि कलयुग में नाम और दान, इन दो चीज़ों में आनन्द मिलता है। नाम का मतलब होता है, भगवान का नाम-संकीर्तन करना, भगवान का नाम लेना। खुद भगवान ने नारदजी से कहा है–

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता: यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥

'हे नारद, मैं वैकुण्ठ में नहीं रहता, योगीजनों के हृदय में भी नहीं रहता, जहाँ कहीं भी मेरे भक्त मेरा नाम गाते हैं, मैं वहीं रहता हूँ।' इसी को कहते हैं कीर्तन। चैतन्य महाप्रभु कहा करते थे कि इस युग में जीवन की गन्दगी को धोने के लिए सबसे अच्छा डिटर्जेन्ट है कीर्तन। न तो निरमा और न ही अन्य कोई डिटर्जेन्ट

काम करते हैं। सबसे बड़ा डिटर्जेन्ट है—भगवान का नाम लेना, एक बार लगा दो तो एकदम साफ। एकदम साफ का क्या मतलब होता है? जब थाली साफ होती है तो चमकती है और तुम्हारा चेहरा उसमें दिखता है न। बस, वैसे ही। और कीर्तन करके जो आनन्द की अनुभूति होती है, वही आत्म-दर्शन है।

अब इसमें दो बातें जानने की हैं। मनुष्य दु:खी है। कीर्तन करता है तो उसको आनन्द मिलता है। कहा भी गया है कि संसार में अनेक प्रकार के दु:ख हैं— *जन्म दु:खं, जरा दु:खं, जाया दु:खं, संसार-सागर दु:खं।* इसी को एक कवि ने मर्मात्मक ढंग से कहा है—

जग चार घड़ी का मेला है।
कुछ तू कह ले, कुछ मैं कह लूँ॥
आराम नहीं, ना चैन यहाँ, अरमान तड़पते रहते हैं,
दु:ख-दर्द-मुसीबत के पौधे दिन-रात पनपते रहते हैं।
मोती जो लुढ़कते दुनिया में, कुछ तू ले ले, कुछ मैं ले लूँ॥
है तंग गली मन-जीवन की, उम्मीद कराहा करती है,
पलकों की दुनियाँ में बैठी, तकदीर रुलाया करती है।
स्व-लक्ष्य पर है तूफान उठा, कुछ तू सह ले, कुछ मैं सह लूँ॥

इस बात को तो सब जानते भी हैं और मजे की बात है कि दु:ख न भी हो, तो भी आदमी को अपने ऊपर दु:ख आरोपित करना अच्छा लगता है। यह कोई मनगढ़ंत बात नहीं है, यह आधुनिक मनोविज्ञान की राय है। तुम दु:खी तो रहते हो और जब कीर्तन में तल्लीन हो जाते हो, तब अपने ऊपर लदे हुए दु:ख के परे तुम अपनी आत्मा, परमात्मा या ईश्वर के निकट पहुँचते हो, इसलिए अच्छा लगता है। अपने सिर पर जो हमेशा दु:ख का सौ किलो का बोझ लिए रहते हो, वह थोड़ी देर हट जाए तो हल्का तो लगना ही है। यही है नाम या संकीर्तन का रहस्य।

नाम के बारे में तो संक्षेप में बतला दिया। अब रह गया दान के बारे में। इंसान स्वभाव से दानी नहीं होता। इंसान स्वभाव से परिग्रही होता है—लाओ, लाओ, लाओ। और जो कुछ भी करता है, वह अपने लिए या अपनों के लिए करता है। दूसरों के लिए जब करता है, तब भी वास्तव में वह अपने लिए ही करता है। इस पर एक कथा है। एक बार देवता, मनुष्य और दैत्य बैठे हुए थे। उस समय आसमान से एक बादल गरजता हुआ, द,द,द बोलता हुआ निकल गया। इन तीनों ने सोचा, इसका मतलब क्या है? चलो ब्रह्माजी से पूछते हैं। देवताओं ने जब पूछा, तब ब्रह्माजी ने कहा, 'दमध्वं—दमन करो, निग्रह करो, नियंत्रण करो।' राक्षसों से कहा, 'दयध्वं—दया करो, करुणावान् बनो, मारो मत।' और इंसान से कहा, 'ददध्वं—दो, दो, दो।'

यह सुनकर वे बोले, 'महाराज! आपने तीनों को तीन अलग-अलग बातें कैसे बतला दीं?' इस पर ब्रह्माजी बोले कि जिसमें जिस विटामिन की कमी होती है, वही गोली उसको दी जाती है। देवताओं में संयम की कमी होती है, वे भोगप्रिय होते हैं। जहाँ मौका मिले, उर्वशी और मेनका को नचाना और सोम रस पीना शुरू कर देते हैं, अच्छे बढ़िया कपड़े पहनते हैं, शृंगार करते हैं, लिप्स्टीक लगाते हैं, आभूषण धारण करते हैं। यही देवताओं की रीत है। भोग की अति हो जाती है और संयम की कमी होती है। इसलिए उनको कहा है, थोड़ा-सा नियन्त्रण करो।

राक्षस लोग जहाँ भी जाते हैं—यहाँ गोली मारो, वहाँ गोली चलाओ, इधर गाड़ी को जला दिया, उसके घर में बम डाल दिया, उसको कत्ल कर दिया, उसकी लड़की को भगा कर ले गए, ऐसे आचरण के लोग हुए दैत्य। तो उनसे कहा, तुममें दया की कमी है। जब तुम किसी को मारते हो, दु:ख होता है न किसी को? जब किसी के बेटे को मार रहे हो या किसी की बेटी को भगा कर ले जा रहे हो या किसी के घर में आग लगाते हो, तो किसी को तो तकलीफ होती होगी, नहीं होती होगी क्या? तुमको कभी ख्याल नहीं आता? तो दैत्य बोले, 'नहीं, हमें उसका कुछ ख्याल नहीं आता।' यही ख्याल आना दया है। दूसरे को तकलीफ हो रही है, इसका विचार अगर तुम्हारे मन में आ जाए, तो वह दया है। दानवों में इसकी कमी होती है। इसलिए दानवों को ब्रह्माजी ने दया का विटामिन दे दिया।

रही मनुष्य की बात। मनुष्य में संग्रह करने की कमजोरी होती है, वह हमेशा संग्रह करता रहता है। अपने बेटे के लिए, अपनी बेटी के लिए, सबके लिए। और कभी-कभी देवताओं को देने के लिए भी पैसा जमा करता है। या फिर अपने अफसर को प्रसन्न करने के लिए चालीस-पचास हज़ार रुपए जमा करके रखता है। उतना दे दिया और अपना तबादला करा लिया। यह किसी की आलोचना नहीं हो रही है, एकदम सच्ची बात है। माने वह जो पैसा देता है, वह भी अपने मतलब की बात कराने के लिए, अपने स्वार्थ के लिए देता है। राक्षस क्रूर हैं, देवता भोगी हैं और मनुष्य स्वार्थी हैं। इसलिए तीनों को अलग-अलग विटामिन दिया। एक को दिया करुणा का विटामिन, दूसरे को दिया आत्म-निग्रह का विटामिन और तीसरे को दिया दान का विटामिन।

प्राचीन काल में जितनी साधनाएँ हम लोगों को बतलाई गई हैं, इस कलियुग में उन सबकी प्रासंगिकता समाप्त हो चुकी है। उन्हें करना भी नहीं चाहिए। जिसकी अवधि समाप्त हो चुकी है, वह दवा खाओगे तो गड़बड़ हो जाएगी। इस कलियुग में जब चारों तरफ सड़क भी गंदी है, कुएँ भी गंदे हैं, सब तरफ प्रदूषण ही प्रदूषण है और सबसे बड़ी चीज़ है कि मैं ही गन्दा हूँ, मेरे अन्दर का आइना ही साफ नहीं है, मेरा मन ही मैला है, तब ऐसी हालत में कोई भी साधना कैसे सम्भव है? तब क्या रास्ता है?

रामचरितमानस के अंत में तुलसीदासजी ने निचोड़ निकाला है और कहा है कि कलियुग में दो साधनाएँ तुम्हारे काम आने वाली हैं। उनमें से एक साधना कीर्तन है। इस कीर्तन के बारे में चैतन्य महाप्रभु ने बहुत विस्तार से लिखा है। वे जहाँ भी जाते थे, कीर्तन ही कराते थे। ढोलक और मंजीरा लेकर 'हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल' कीर्तन कराते थे। इसी कीर्तन की व्यवस्था को हम लोगों ने यहाँ रिखिया में शुरू किया है। और हमने कहा कि इसका पूरा आयोजन नन्हें कन्या-बटुकों के द्वारा करवायेंगे, बड़ों से, इन दाढ़ी वालों से नहीं, क्योंकि इन सब दाढ़ी वालों का दिल गंदा हो चुका है। ये सब बगुला भगत हैं। चुपचाप योगी की तरह बैठे रहते हैं और जहाँ मछली आई झट से झपट लेते हैं। छोटे बच्चे बगुला भगत नहीं होते। मैं बड़े लोगों की आलोचना नहीं कर रहा हूँ, केवल अंतर बतला रहा हूँ। छोटे बच्चे बगुला भगत नहीं हैं, इनके मुँह में जो आता है सो बोल देते हैं, मछली खाने को हो तो सीधे माँग लेंगे और तू बोलना हो तो तू भी बोल देंगे।

इसका वैज्ञानिक कारण भी है। शारीरिक विज्ञान और मनोविज्ञान में भी एक उम्र बतलाई है, जिस उम्र तक व्यक्ति का हृदय शुद्ध रहता है। तंत्र-शास्त्र और धर्म-शास्त्रों में भी एक उम्र बतलाई है जब तक व्यक्ति का मन निर्मल रहता है। उसके पास कोई दूसरा उपाय है ही नहीं, उसे शुद्ध रहना ही होगा, क्योंकि तब तक उसके शरीर में वे हॉर्मोन काम ही नहीं कर रहे होते हैं, जिन हॉर्मोनों के कारण आदमी के मन में अशुद्ध विचार उत्पन्न होते हैं। पढ़े-लिखे जानकार लोग इस बात को तुरन्त समझ सकते हैं। शरीर में कुछ छोटी-छोटी ग्रंथियाँ होती हैं, जिनसे कुछ रस निकलता है, उसी को हॉर्मोन कहते हैं। इन हॉर्मोनों के निकलने की एक उम्र होती है।

शरीर के अन्दर अनेक ग्रन्थियाँ होती हैं। जो एड्रीनल ग्रन्थि होती है, वह घबराहट और क्रोध पैदा करती है, एड्रीनल ग्रन्थि से अधिक स्राव होने पर डर लगने लगता है, पेशाब और टट्टी जल्दी-जल्दी होने लगती है। इसी प्रकार से अन्य ग्रन्थियाँ शरीर के अन्दर अलग-अलग प्रकार के भाव उत्पन्न करती हैं। एक ग्रन्थि होती है जो मनुष्य के हृदय में कामवेग उत्पन्न करती है। वह ग्रन्थि एक उम्र के बाद काम चालू करती है। जब तक उसका काम चालू नहीं होता, तब तक वह बच्चा ब्रह्मचारी है, बटुक है और लड़की कन्या है और तब तक वह भगवान की कृपा, स्वरूप, आशीर्वाद और उनके लक्षण की अच्छी माध्यम बनती है। जैसे बिजली का अच्छा माध्यम ताम्बा या एलुमिनियम है। अब लकड़ी का तार बना दोगे तो बिजली प्रवाहित ही नहीं होगी। वैसे ही भगवान की कृपा हम लोगों में से प्रवाहित हो ही नहीं सकती है। हम कितना भी तुम लोगों को कीर्तन करायेंगे, काम ही नहीं करेगा, क्योंकि हम ही तो खुद खटारा हैं।

मनुष्य के पवित्र होने का लक्षण है कि वह संसार में द्वैत को न देखे। गर्मी-ठण्ढी, अच्छाई-बुराई, स्त्री-पुरुष, ऐसा अन्तर देखना द्वैत-भाव है। जब तक यह द्वैत-भाव है, तब तक भगवान की कृपा तुममें प्रवाहित नहीं हो सकती। इसीलिए जब ये छोटे बच्चे कीर्तन करते हैं, तब भगवान की मौजूदगी प्रकट होती है। और इसीलिए हमने यहाँ दो चीजें शुरू की हैं। इनसे कीर्तन कराते हैं और खूब देते हैं। आखिर यही दो चीजें इस युग में काम आने वाली हैं न?

दान एक विज्ञान है, पर इसमें ज्यादा बुद्धि मत लगाओ। देकर देखो तो खुद पता चल जाएगा। हम एक बार हवाई जहाज से जा रहे थे तो हमारी बगल में एक अंग्रेज़ औरत बैठी थी। उसने भारतीय मिठाइयों पर एक शोध-पत्र लिखा था। जब हमारे पास रसगुल्ला आया, तब उसने हमसे पूछा कि यह क्या है। हमने कहा, 'जो तुमने किताब में लिखा वही रसगुल्ला है।' उसने कहा, 'हमने कभी खाया ही नहीं, लिखा जरूर है। सुनते हैं बहुत मीठा होता है।' हमने कहा, 'जरा खाकर देखो।' ठीक वैसे ही तुम देकर देखो, खुद जान जाओगे। हमने इस रास्ते में बहुत प्रयोग किये हैं। हृदय पवित्र होता है, भय कम होता है और लोगों के प्रति करुणा का भाव बहुत अधिक जागृत होता है।

हम मुंगेर में सबसे पहले सन् 1956 में गए थे। वहाँ एक जज के यहाँ हम रहते थे, बाद में श्री केदारनाथ गोयनका के आनन्द भवन में रहने लग गए थे। वहाँ एक टीला था, उसका नाम था कर्ण चौरा। कहते हैं कि वहाँ पर द्वापर युग में कर्ण का महल था। और महाराजा कर्ण की इष्टदेवी वहीं बगल में हैं, चण्डी माँ। वह चण्डी स्थान में जाकर तप करता था और फिर अपनी सिद्धि से सोना पैदा करता था। जब वहाँ से आता था, उस सोने को ब्राह्मणों को दान देता था। जहाँ पर बैठ कर दान देता था, उसी स्थान का नाम है कर्ण चौरा।

उस समय जब हम मुंगेर आते थे तो दिन में वहाँ कर्ण चौरा पर जाते थे। वहाँ एक समतल जगह थी, उसी पर बैठते थे और वहीं आराम के साथ लेट जाते थे। हमें गृहस्थों के घर में रहना पड़ता था, पर अच्छा तो नहीं लगता था। इसलिए दिन में अपना जितना समय होता था, हम कर्ण चौरा में निकाल लेते थे एकान्त में। कई सालों तक ऐसा चक्कर चला। फिर नीचे लाल दरवाजे में आश्रम बना, उसके कुछ साल बाद सन् 1974 में हमने कर्ण चौरा को मोल ले लिया। जब से हम वहाँ रहने लगे, हमारी पूरी मनोवृत्ति, हमारा पूरा व्यवहार ही बदल गया, क्योंकि महाराजा कर्ण का संस्कार जो था, वह एक दानी का संस्कार था। महाभारत में इसकी कहानी आती है। कितनी चीज़ें उसने दे दी थीं, जबकि उसको मालूम था कि ये लोग उसे ठगने के लिए आए हैं। अब ऐसे आदमी की धरती में कोई बैठे और उसके विचारों में कोई परिवर्तन न हो, वह संभव नहीं है। और हम वहाँ बैठ गए तो स्वाभाविक है कि हममें भी परिवर्तन आ गया।

जब तक हम गोयनका जी के आश्रम में थे, हम भी इधर-से-उधर करते रहते थे, जैसे सब लोग करते थे, पर यहाँ आने के बाद हमारा विचार पूरा-का-पूरा बदल गया। उस वक्त मुंगेर के पास लक्ष्मीपुर दियारा था। गंगा को पार करके जाना पड़ता था। वहाँ दो गुटों के बीच लड़ाई हो गई, आगजनी हो गई, सब घर जल गए। हमको किसी ने कुछ बोला नहीं, पर जब हमको खबर लगी तो हमने पटना से एक स्टीमर बुक किया, उसमें कपड़ा, कम्बल, चावल, गेहूँ, पाव-रोटी वगैरह जो भी काम की चीज़ें होती हैं, उनको भर दिया और सब स्वामी लोगों को कहा, 'जाओ, जब तक उन लोगों का पुनर्वास नहीं होता है, तब तक तुम वहीं रहो।'

अब दो-तीन हजार की बस्ती के लोगों का पुनर्वास इतना मुश्किल काम था, परन्तु पता नहीं कैसे हमें इतनी मदद आने लगी। उस वक्त परमेश्वरी बाबू अग्रवाल, जो संसद सदस्य थे, वे झरिया में थे, उन्होंने बिना मांगे बीस हजार कम्बल भेज दिये। लक्खीसराय वगैरह से ट्रक के ट्रक चावल पहुँचने लग गये। हमने किसी को कुछ बोला नहीं, कोई अपील नहीं की। उन दिनों शायद दूरदर्शन भी नहीं था, सिर्फ रेडियो चलता था। हमें इतनी मदद पहुँची कि बेगुसराय और खगड़िया के लोगों ने रोज थैले का थैला दूध भेजना शुरू कर दिया। एक ने तो मेरे से कहा कि हमारी पूरी जमीन में से जितनी सब्जी आपको निकालनी है, सब सब्जी ले लो पूरे दो महीने। हमने वहाँ सबकी दवा-दारू की, जिन्हें मरना था सो तो मर गये, लेकिन लोगों को राहत हो गई। सबसे बड़ी चीज़ है कि उन लोगों के बीच बिल्कुल सुलह करा दी। वे नेपाल से गांजा लाते थे, इधर बेचते थे, इधर का उधर करते थे, उधर का इधर करते थे। सब बेच देते थे, छोकरियों को भी बेच देते थे वे लोग। कोई दया-माया नहीं और उसी कारण से झगड़ा शुरू हुआ था, लेकिन हमने दोनों गुटों में सुलह करा दी।

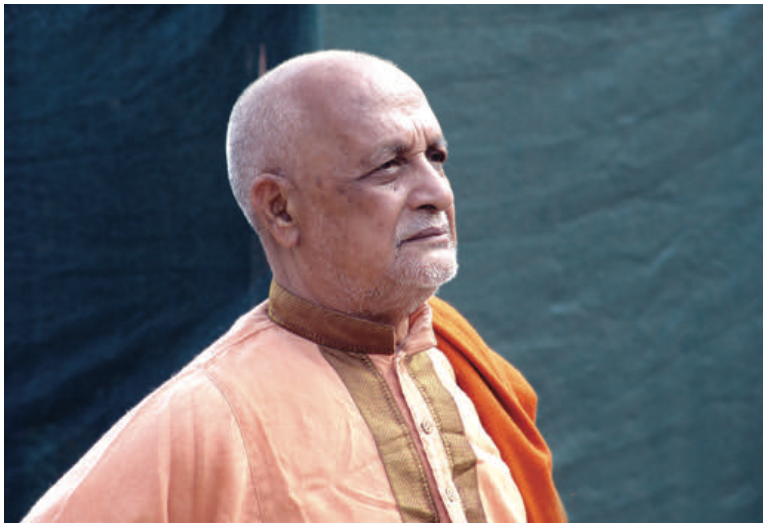

दु:ख और सुख सज्जन को भी आते हैं और दुर्जन को भी। एक संत-महात्मा भी बीमार पड़ता है और एक बदमाश, चोर, गुण्डा, खूनी आदमी भी बीमार पड़ता है। उसके घर में भी लड़कियाँ विधवा होती हैं, बहू-बेटियाँ बीमार होती हैं। उसके घर में वही कुछ होता है, जो एक अच्छे आदमी के घर में होता है। फिर एक और बात जानने की है। क्या हम सब दूध के धुले हैं? फर्क यही है कि हम मन से पाप करते हैं और वे शरीर से पाप करते हैं, अपराध करते हैं। हम तो कितने लोगों को जान से मारने की सोचते हैं, नहीं सोचते हैं क्या? मन करता है न?

मानसिक अपराध तो हम सब करते ही हैं। मानसिक रूप से हम बलात्कार भी करते हैं, चोरी-डकैती भी करते हैं, झूठ बोलता हूँ तो बतला दो। मानसिक रूप से हम दूसरों का बुरा चाहते ही हैं। हाँ, एक-आध संत होगा जो दूसरे का बुरा नहीं चाहता या एकदम बेवकूफ आदमी, जिसे समझ में ही नहीं आता कि कौन अच्छा है, कौन बुरा। मगर निन्यानवे प्रतिशत लोग तो अपराधी होते हैं। फर्क क्या है? एक सही में अपराधी होता है, जो क्रिया में चला जाता है और क्रिया में जाने से इसको तकलीफ होती है। इन लोगों को भी तकलीफ होती है। इनके प्रति कुछ लोगों को ख्याल करना चाहिए।

दूसरी बात है, देने की कला अपने अंदर की स्वार्थ-भावना को बहुत जल्दी दूर करती है। जब हम कर्ण चौरा पर बैठे, हमारा पूरा स्वभाव बदल गया। और जब हम यहाँ पहुँचे, तब हमने एक ही निश्चय कर लिया कि दो चीज़ों पर हम जोर देंगे—एक है नाम, दूसरा है दान।

—20 सितम्बर 2006, रिखियापीठ

अनासक्ति योग

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

लोग गीता का अध्ययन करते हैं और कहते हैं कि यह एक धर्म शास्त्र है, एक दर्शन शास्त्र है। लेकिन वास्तव में गीता न तो धर्म शास्त्र है, न ही दर्शन। अगर हम से पूछा जाए तो हम कहेंगे कि यह जीवन का शास्त्र है। जीवन की घटनाओं से गुजरकर मन स्वाभाविक रूप से निराशा, शोक, विषाद और अवसाद को प्राप्त करता है। इस मानसिक अवस्था को किस प्रकार सुव्यवस्थित कर सकते हैं, किस प्रकार अपनी प्रतिभा को जाग्रत कर जीवन में आगे बढ़ सकते हैं, यही गीता का एक संदेश है।

जब अर्जुन युद्धभूमि में अपने बन्धु-बान्धवों को देखकर विषादग्रस्त हो जाता है, तब श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि तुम्हारी आसक्ति और सम्बन्ध के कारण ही तुम्हें शोक हो रहा है। इस संसार में जब प्राणी का जन्म होता है, तब आत्मा इस शरीर में प्रवेश करती है और उसका योग इन्द्रियों एवं मन के साथ होता है। मन एवं इन्द्रियाँ, संसार में भोग के विषयों से जुड़कर सुख की कामना करते हैं।

मन में जो इच्छाएँ प्रकट होती हैं, उनका सम्बन्ध मुख्य रूप से चार चीजों के साथ रहता है—आहार, निद्रा, भय और मैथुन। ये मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ हैं। इन्हीं मूल प्रवृत्तियों को पूरा करने के लिए मन में विचार और इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं। इच्छा को पूरा करने के लिए जब प्रयास होता है और उस प्रयास से जब कुछ प्राप्ति होती है, तब आसक्ति का जन्म होता है। इस प्रकार इच्छा और आसक्ति मन का स्वभाव है, और विषयों की ओर आकर्षण इन्द्रियों का। जब आँख किसी आकर्षक वस्तु को देखती है, तब उसे प्राप्त करना चाहती है। अगर हाथ किसी कोमल वस्त्र को छूता है, तो उसे प्राप्त करना चाहता है। श्रीकृष्ण अर्जुन को बताते हैं कि यह पूरा जीवन इन्द्रियों और मन का ही खेल है। जब यह मन विषयों और सम्बन्धों में आसक्त हो जाता है, तब शोक का जन्म होता है।

अनित्य वस्तुओं से आसक्ति

श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि जीवन में अनित्य वस्तु के लिए शोक करने से कोई फायदा नहीं, जबकि नित्य का ख्याल करने से तुम्हें हमेशा सुख मिलेगा। मकान का ख्याल करो क्योंकि वह तुम्हारे साथ जिन्दगी भर चलने वाला है—कुर्सी, मेज, अलमारी, तकिया या रजाई तो अनित्य हैं। हम आज जिस कम्बल, कुर्सी या कपड़े का उपयोग कर रहे हैं, कल उसे फेंककर दूसरा ले लेंगे। फिर भी हम जीवन में अनित्य वस्तुओं से बेमतलब आसक्त हो जाते हैं।

हमें अपने जीवन की एक घटना याद है। एक बार हमें गुरुजी ने एक पेन दिया। हमने उसका खूब उपयोग किया। उसकी स्याही खत्म हो गई, फिर भी उसे सालों तक अपने पास रखा। हम उसे छोड़ना नहीं चाहते थे, क्योंकि मन में यह विचार था कि गुरुजी का दिया हुआ पेन है। हम भूल गए कि इसका भी एक एक्सपायरी पीरियड होता है। एक दिन किसी व्यक्ति ने कहा, 'इतने वर्षों से यह पेन इस मेज की दराज में क्यों रखा है? यह तो काम भी नहीं करता। न इसकी निब मिलती है, न ही स्याही। इसको फेंकते क्यों नहीं।' हम बिगड़ गए। हमने कहा, 'कैसी बात करते हो? मुझे यह पेन मेरे गुरुजी ने दिया है। भले ही यह काम न करे, पर मैं इसे जरूर रखूँगा।'

बाद में हम सोचने लगे कि वह व्यक्ति तो ठीक कह रहा है। हमने दस साल से उस पेन को मेज की दराज में देखा-छुआ तक नहीं और जिस वस्तु का हमने जीवन में दस सालों तक उपयोग ही नहीं किया, उससे आसक्ति क्यों? अगर ऐसी आसक्ति हर चीज से हो जाए, तो हम लोगों का मकान छोटा पड़ जाएगा। इतनी सारी चीजों को कहाँ-कहाँ रखेंगे? और उस संग्रह का फायदा भी क्या? हमारे चले जाने के बाद किसी दूसरे के लिए उन सब चीजों का कोई महत्त्व भी नहीं।

श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि तुम्हें तुम्हारी आसक्ति और सम्बन्ध के कारण शोक हो रहा है। आसक्ति मन को भ्रमित और विचलित कर देती है। इसलिए पहला प्रयास होना चाहिए कि तुम अपने मन को स्थिर रखो। इसका एक ही उपाय है। अपने मन को अनित्य से हटाकर नित्य से जोड़ दो। अगर मानते हो कि यह संसार, यह शरीर अनित्य है और चालीस, पचास या साठ साल के बाद हमको यह शरीर छोड़ना ही पड़ेगा, तो फिर इसको पकड़कर रोते क्यों हो? यह तो ऐसे ही

हुआ, जैसे कोई आदमी एक पेड़ को पकड़कर खड़ा हो जाए और चिल्लाने लगे कि पेड़ ने मुझे पकड़ लिया है, मुझे छोड़ नहीं रहा है। तुमने पेड़ को पकड़ा है, पेड़ ने तुम्हें नहीं। तुम संसार को पकड़े बैठे हो, संसार ने तुमको नहीं पकड़ा है। संसार तुम्हारी परवाह भी नहीं करता। जब तक तुम समाज को कुछ दे सकते हो, तब तक समाज परवाह करेगा, उसके बाद नहीं। एक बड़े अफसर को सेवानिवृत्ति के बाद उसका बैरा भी सलाम नहीं करता। इस सत्य को हर व्यक्ति जानता है।

इसलिए कृष्ण जी कहते हैं कि अनित्य से अपने मन को हटा दो। जितने प्राणी तुम यहाँ युद्ध के लिए तैनात देख रहे हो, ये सब पहले से ही मर चुके हैं। जो लोग पहले से ही मर चुके हैं, उनके लिए शोक करने से क्या फायदा? हमारे कितने ही पूर्वज रहे होंगे, लेकिन क्या हम उन सभी को जानते हैं? हम केवल अपने पिता, अपने दादा, ज्यादा-से-ज्यादा अपने परदादा को जानते हैं। उसके पहले के पूर्वज कौन थे, कैसे थे, कहाँ थे, कोई नहीं जानता।

कृष्ण जी यहाँ पर यही बात समझाते हैं कि जो भी प्राणी इस जगत् में आता है, मान लो कि वह जीवित नहीं, मर चुका है। वह प्राणी न जन्म से पहले यहाँ उपस्थित था, न ही मृत्यु के बाद उपस्थित रहेगा। जन्म और मृत्यु के बीच में ही वह यहाँ पर दिखलाई देता है और जो केवल बीच में दिखलाई देता है, उसको हमेशा अनित्य मानो। जो परिवर्तनशील है, वह कभी नित्य नहीं हो सकता।

इसलिए तुम्हारा जो भी धर्मसंगत और न्यायसंगत कर्त्तव्य है, उसे आसक्ति-रहित होकर करते रहो। तब फिर वह कर्म तुमको कभी विषाद में नहीं बाँधेगा। लेकिन अगर तुम्हारा कर्म और आचरण धर्मसंगत नहीं है, तो वह कर्म तुम्हें रात को सोने भी नहीं देगा। अगर कर्म धर्मसंगत हो तो आदमी आराम से बिना किसी परेशानी, तनाव या चिंता के सो सकता है। इसलिए कर्म को हमेशा धर्मसंगत और न्यायसंगत बनाने का प्रयास करो और अपने मन की विचलित अवस्था को संभालने का प्रयास करो। जब तुम्हारा मन शान्त और स्थिर हो जाएगा, तब तुम योगावस्था को प्राप्त करोगे।

स्थिरबुद्धि मनुष्य के लक्षण

यहाँ पर अर्जुन प्रश्न करता है, 'हे कृष्ण, आप कहते हैं कि व्यक्ति की बुद्धि स्थिर होनी चाहिए। संसार में किसकी बुद्धि स्थिर है? और अगर स्थिरबुद्धि वाला कोई पुरुष है, तो उसके क्या लक्षण होते हैं? वह कैसे बोलता, बैठता, चलता है? इस संसार में उसका आचरण कैसा होता है?'

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥2.54॥

यहाँ पर अर्जुन एक अहम बात को लाता है। अभी तक भगवान ने अर्जुन को जितनी बातें कहीं हैं, उनमें मुख्य यही है कि अपने मन को ईश्वर से जोड़ो। धर्म और न्याय द्वारा निर्धारित कर्म करो। अनित्य के बजाय नित्य के साथ सम्बन्ध जोड़ो। कर्त्तव्य को निभाते समय फल की अपेक्षा मत करो, परिणाम की आशा मत रखो। सफलता-विफलता की परवाह किये बगैर अपने कर्त्तव्यों को निभाते जाओ और अपने आप को उनके परिणामों से मुक्त रखो। जब जीवन में शोक, विषाद, वासना, आसक्ति, अहंकार, क्रोध और अवसाद के कारण बुद्धि विचलित हो जाती है, तब उस बुद्धि को स्थिर बनाने का प्रयास करो। अब अर्जुन कौतूहलवश कृष्ण जी से पूछता है कि भगवन आप ही बताइए, जिस व्यक्ति की बुद्धि स्थिर हो गई है, वह कैसे जीता है, रहता है, चलता है, बोलता है? श्रीकृष्ण उत्तर देते हैं–

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥2.55॥
दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥2.56॥

अर्जुन! पहले इस बात को ध्यान में रखना कि स्थिर बुद्धि उसी व्यक्ति की होती है, जिसने अपने मन में स्थित संपूर्ण कामनाओं का त्याग कर दिया है। जिसके मन की इच्छाएँ और वासनाएँ कम हो गई हैं, उसी की बुद्धि स्थिर होने लगती है। एक बार किसी साधक ने हमारे गुरु, स्वामी सत्यानन्द जी से प्रश्न किया कि आध्यात्मिक प्रगति का मापदण्ड क्या है। साधक को कैसे मालूम पड़ेगा कि वह आध्यात्मिक जीवन में प्रगति कर रहा है? क्या आठ घण्टे आसन-प्राणायाम करने से आध्यात्मिक प्रगति का आभास होता है? क्या ध्यान की गहराई में जाने से आध्यात्मिक प्रगति की अनुभूति होती है?

गुरुजी ने जवाब दिया कि आध्यात्मिक प्रगति का लक्षण यही है कि तुम्हारे जीवन में जो कामनाएँ, इच्छाएँ और वासनाएँ हैं, वे धीरे-धीरे कम हो जाएँ। अभी तुम्हारे जीवन की इच्छाएँ-वासनाएँ-कामनाएँ तुम्हें संसार और उसके भोगों की ओर आकर्षित कर रही हैं। लेकिन जब ये कामनाएँ कम हो जाती हैं और तुम अपने में ही स्थित रहना चाहते हो, तो यह आध्यात्मिक प्रगति का लक्षण है।

श्रीकृष्ण भी यहाँ कह रहे हैं कि स्थिर बुद्धि उस व्यक्ति की है, जो अपने जीवन की इच्छाओं और कामनाओं से मुक्त हो गया है। इच्छा और कामना ही व्यक्ति के मन को चंचल और बहिर्मुखी बनाकर संसार से जोड़ती है। कामना अपने आप में गलत नहीं है, आखिर वही हमें ईश्वर से भी जोड़ती है। लेकिन कामना का उपयोग किस प्रकार से होता है, इस पर ध्यान देना है। जैसे एक चाकू का अपने आप में कोई गुण नहीं होता। लेकिन कर्म के आधार पर उस चाकू के

गुण को निश्चित किया जाता है। जब चाकू का उपयोग किसी का गला काटने के लिए करते हो, तब चाकू का उपयोग तामसिक कहलाता है। जब चाकू का उपयोग भोजन हेतु सब्जी काटने में करते हो, तब वह राजसिक कहलाता है। जब चाकू का उपयोग डॉक्टर किसी की जान बचाने के लिए करता है तब वह उपयोग सात्त्विक कहलाता है। चाकू तो एक चीज है, लेकिन कर्म के आधार पर उसके तीन उपयोग और गुण दिखलाई देते हैं।

इसी प्रकार हमारे जीवन की इच्छा और कामना भी महत्त्वपूर्ण वस्तु है। उसी से हमें जीवन में कुछ प्राप्त करने, जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा और ऊर्जा मिलती है। हमें केवल यह ख्याल करना है कि उस इच्छा में तामसिकता और राजसिकता न हो। जब इच्छा सात्त्विक होती है, तब उसमें कोई दिक्कत नहीं होती।

जब व्यक्ति के जीवन में इच्छाओं का नकारात्मक प्रभाव नहीं रहता, जब व्यक्ति को बहिर्मुखी बनाकर संसार से बाँधने वाली तामसिक और राजसिक इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं, तब मनुष्य स्थिर बुद्धि को प्राप्त करता है। स्थिर बुद्धि को प्राप्त करने के बाद उस व्यक्ति के भीतर राग, भय और क्रोध नष्ट हो जाते हैं। दु:ख में भी मन उद्विग्न नहीं होता और सुख की प्राप्ति में भी व्यक्ति सर्वदा नि:स्पृह रहता है। स्थिर बुद्धि के यही लक्षण भगवान यहाँ पर बतलाते हैं।

राग, भय और क्रोध– ये तीनों महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं। राग क्या है? राग का मतलब होता है आकर्षण। योग सूत्रों में कहा गया है, *सुखानुशयी राग:, दु:खानुशयी द्वेष:*। जिस भी वस्तु से हमें सुख की प्राप्ति सम्भव लगती है, वहाँ पर हमारा राग होता है, और जहाँ पर दु:ख की सम्भावना है, वहाँ हमारा द्वेष होता है। सुख की खोज हर व्यक्ति के जीवन में राग को प्रबल बनाती है। राग सुख की ओर अन्धी दौड़ है। अगर अपनी बुद्धि को स्थिर बनाना है तो पहले राग, भय और क्रोध, इन तीनों के प्रभाव से मुक्त होना है।

प्रत्याहार

स्थिरबुद्धि मनुष्य के लक्षण जानने के बाद अर्जुन इस अवस्था को प्राप्त करने का उपाय जानना चाहता है। श्रीकृष्ण अर्जुन को बतलाते हैं–

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वश: ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥2.58॥

जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को समेट लेता है, वैसे ही जब मनुष्य इन्द्रियों के विषयों से अपनी इन्द्रियों को हटा लेता है, तब उसकी बुद्धि स्थिर होती है।

यहाँ पर कृष्ण जी योग के एक अभ्यास की चर्चा कर रहे हैं, जिसे हम लोग प्रत्याहार कहते हैं। महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित योग दर्शन में योग के आठ अंगों को समझाया गया है। इसमें यम और नियम प्रथम दो अंग हैं, जिनका सम्बन्ध आंतरिक संयम और अनुशासन को प्राप्त करने से है। आसन और प्राणायाम तीसरे और चतुर्थ पद हैं, जिनका प्रयोजन शारीरिक स्वास्थ्य और ऊर्जा की वृद्धि है। प्रत्याहार और धारणा पाँचवे और छठे सोपान हैं, जिनका उद्देश्य मन की चंचलता को दूर करना, उसको व्यवस्थित, स्थिर और शांत करना है। सातवें और आठवें अंग में आते हैं ध्यान और समाधि, जिनका प्रयोजन होता है आत्मानुसंधान में प्रवृत्त होना।

यहाँ कृष्ण जी जिस अवस्था की बात कर रहे हैं, वह अवस्था योग के पाँचवें अंग, प्रत्याहार की है। प्रत्याहार में बतलाया जाता है कि अपनी इन्द्रियों को बाहर

से समेट लो। आँखें अगर खुली हैं, तो उन्हें बन्द कर लो। कानों में जो आवाज सुनाई दे रही है, उन आवाजों को सुनना बन्द कर दो। इन्द्रियों के सब अनुभवों को एक बार रोक दो। क्षण मात्र के लिए ही सही, लेकिन वह क्षमता होनी चाहिए कि हम इन्द्रियों और मन के इस व्यूह से स्वयं को मुक्त कर सकें। इसी के लिए प्रत्याहार का अभ्यास है। मन को स्थिर और शांत करने तथा भय, राग और क्रोध से मुक्त होने के लिए यहाँ पर श्रीकृष्ण प्रत्याहार की विधि को समझाते हैं। वे आगे कहते हैं–

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥2.61॥

साधक को चाहिए कि वह सम्पूर्ण इन्द्रियों को वश में करके समाहित चित्त हुआ मेरे परायण होकर ध्यान में बैठे, क्योंकि जिस मनुष्य की इन्द्रियाँ वश में होती हैं, उसकी बुद्धि स्थिर होती है। इन्द्रियों को वश में करना ही प्रत्याहार कहलाता है। प्रत्याहार के साधनों में पहला अभ्यास आत्मसजगता की वृद्धि है, और दूसरा अभ्यास है, एकाग्रता को प्राप्त करना। उसके पश्चात् मन इन्द्रियों के जो अनुभव प्राप्त कर रहा है, उस पर रोक लगा देना। इस साधना का अभ्यास हम लोग दिन में भले ही पाँच मिनट करें, लेकिन जरूर करें, ताकि उस चीज को जान सकें जिसकी चर्चा कृष्ण जी यहाँ पर कर रहे हैं।

–16 फरवरी 2012, शिवालय, मुंगेर

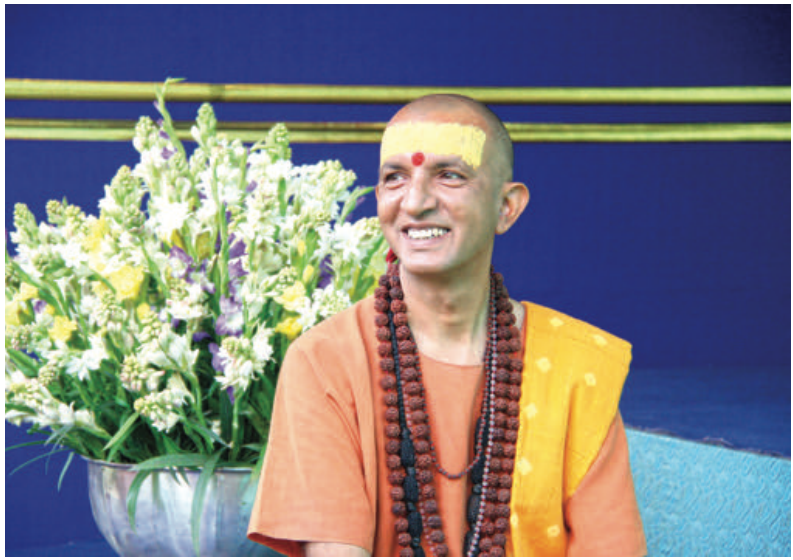

विचार-संयम तथा विचार-शून्यता

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

आप निष्पक्ष भाव से अपने दिनभर के या एक घण्टे के या मात्र एक मिनट के विचारों का अवलोकन करेंगे तो आप यह जानकर आश्चर्यचकित रह जायेंगे कि आपके निन्यानवे प्रतिशत और कभी-कभी तो सौ प्रतिशत विचार कूड़ेदान में फेंक देने लायक ही होते हैं। उनका कोई उद्देश्य, कोई प्रयोजन नहीं रहता और प्राय: वे हानिकारक सिद्ध होते हैं क्योंकि उनसे चिन्ता, थकावट, झुंझलाहट और तनाव ही उत्पन्न होता है।

इसके विपरीत एक ऐसे मन की कल्पना कीजिए जिसमें केवल एक ही विचार है अर्थात् एकाग्र मन, या फिर ऐसा मन जिसमें कोई विचार है ही नहीं अर्थात् विचारशून्य या निर्विकल्प मन। यह कहना कठिन नहीं कि किस मन की क्षमता श्रेष्ठ है। एकाग्र मन आसानी से किसी भी ऐसे रहस्य को सुलझा सकता है जिसपर उसकी एकाग्रता टिकी है, और एक विचारशून्य मन तो सभी रहस्यों का उद्घाटन कर सकता है। विचारशून्य या निर्विकल्प स्थिति में कोई अवरोध शेष नहीं रह जाता है।

दूसरी ओर वह मन जो विचारों के शोरगुल से निरन्तर प्रभावित है, उस सारथि के समान है जिसका रथ उसके घोड़ों द्वारा विभिन्न दिशाओं में खींचा जा रहा है। उसकी दशा की कल्पना तो कीजिए। एक घोड़ा दाहिनी ओर खींच रहा है तो दूसरा बाईं ओर। और बाकी घोड़े सीधे सामने के गढ्ढे में! मानव जाति की सर्वश्रेष्ठ उपब्धियाँ ऐसे मन की उपज हैं जो विक्षिप्त विचारों की इस दुर्बल अवस्था से ऊपर उठ गया है। हालाँकि विभिन्न प्रकार के विचारों का चिन्तन मन की स्वाभाविक अवस्था है, पर शायद यह मानसिक निपुणता की सबसे निम्नस्तरीय अभिव्यक्ति है।

एकाग्र मन शक्तिशाली एवं तीक्ष्ण होता है और इस विक्षिप्त विचार शृंखला को भेद सकने में अत्यन्त सक्षम होता है, क्योंकि उसकी एकाग्रता की ध्येय वस्तु, इन सभी विचारों से कहीं अधिक आकर्षक और प्रिय होती है। एकाग्रता की अवस्था में मन एक संगठित ऊर्जा प्रवाह का रूप ले लेता है जो ध्येय वस्तु पर ज्ञान और प्रकाश डालकर उसके रहस्य को समझ लेता है।

जब हम विचारशून्य मन की बात करते हैं तो हमें याद रखना चाहिए कि यह वही विक्षिप्त मन है जो विचारहीन बना है। यह कोई अलग मन नहीं है। यह मन का रूपान्तरण है, विक्षिप्त से एकाग्रचित्त और अंत में पूर्णत: विचारहीन। आपका मन वही मन रहता है, उसी विचार, धारणा, भावना, स्मृति, राग, द्वेष और आसक्ति के साथ। केवल कुछ समय के लिए वे मनोवृत्तियाँ गौण हो जाती हैं और आप पर उनकी पकड़ ढीली पड़ जाती है। उस समय आपका ध्येय कुछ और बन जाता है। यह एक गहन विश्रान्ति का क्षण होता है। मन में नई स्फूर्ति का संचार होता है और मन के माध्यम से शरीर में भी।

जैसे-जैसे मन एकाग्र और धारणा में प्रवृत्त होता है, देश और काल के बंधन ढीले होते जाते हैं। एकाग्र मन समय की सीमाओं को लाँघकर ऐसे क्षेत्र में प्रवेश कर सकता है जहाँ उसे ध्येय का सम्यक् बोध हो जाता है। इस बोध की विशेषता यह रहती है कि जिस मन में यह ज्ञान उदित होता है, उसमें कुछ हानि या विघ्न उत्पन्न नहीं होता, बल्कि उसमें कुछ जुड़ता है, उस मन का सृजन और पोषण होता है।

अपने आप को एक शान्त, स्थिर झील के ऊपर खड़ा देखिये। आपको अपना प्रतिबिम्ब ज्यों का त्यों दिखाई देता है। अकस्मात् झील के बीच में एक पत्थर गिर जाता है और झील में लहरें उठती हैं। पहले एक, फिर अनेक। हमारे विचारों की भी यही कहानी है। शान्त, एकाग्र मन में एक विचार आकर गिरता है जिसकी लहरों और वृत्तियों से मन अपने केन्द्र से दूर, बहुत दूर बह जाता है। और कभी तो इतना दूर कि मन को वापस अपनी एकाग्रता के बिन्दु पर लाना असंभव-सा हो जाता है।

विचारों पर संयम का, विचार-शून्यता का आखिर क्या प्रयोजन? ऐसी कल्पना कीजिए कि आप पूर्णतया तनावमुक्त, शिथिल एवं शान्त हैं। वैसी शान्ति और तनावमुक्ति नहीं जैसी आपको समुद्र तट या पहाड़ों पर घूमने से अनुभव होती है।

उसकी भी अपनी अहमीयत है पर विचार-शून्यता का अनुभव श्रेष्ठतर है, क्योंकि यह स्थायी है। मानो यह कभी न समाप्त होने वाली शान्ति आपका जन्मसिद्ध अधिकार हो। और वाकई यह आपका जन्मसिद्ध अधिकार है, आपको केवल यकीन करना है, और यह समझने का प्रयास करना है कि विचार और प्रति-विचार की निरन्तर शृंखला कितनी निरर्थक है।

इसी वजह से एकाग्रता को मानसिक सन्तुलन और शालीनता भी कहा गया है। हम सभी जानते हैं कि किसी की सन्तुलित, ललित चाल कितनी मनोहारी दिखलाई पड़ती है। यदि यह बात शारीरिक लालित्य पर लागू होती है तो अवश्य ही मानसिक लालित्य पर भी लागू होगी। मानसिक शालीनता एक ऐसा सम्मिश्रण है आन्तरिक लावण्य और स्वनियंत्रण का जो किसी के भी मन को सहज मोह लेता है।

मन की विचार-शून्यता एक ऐसी अवस्था है जो मन की जन्मजात क्षमता एवं प्रतिभा को अभिव्यक्त करती है। क्या बगैर मन के कोई जन्मा है? नहीं। हम सबके पास मन है और हम सब उसकी विभिन्न क्षमताओं का अनुभव कर रहे हैं। सोचना, विचारना, समझना, स्मरण करना, सुलझाना, समझना, चाहना, अनुभव करना, विवेचन करना, विवाद करना—ये सब मन की विभिन्न क्षमताएँ हैं जिनके बिना हमारे लिए इस जटिल समाज में कार्य करना बहुत कठिन होगा। आप देखते होंगे कि ये सब कार्य मन कितनी अच्छी तरह से करता है, क्योंकि मन को इसी तरह प्रशिक्षित किया गया है।

यह प्रशिक्षण की ही बात है। जिस प्रकार आपने समाज में जीवन यापन करने के लिए और उसकी समस्याओं को सुलझाने के लिए मन को प्रशिक्षित किया है, उसी प्रकार आपको अन्दर की दुनिया देखने और समझने के लिए भी मन को प्रशिक्षित करना होगा। ये दोनों आपके अस्तित्व की सच्चाइयाँ हैं। जैसे-जैसे आपको अन्तर्जगत् की अनश्वरता का अहसास होने लगेगा वह बाह्य जगत् की क्षणभंगुरता से कहीं अधिक आकर्षक प्रतीत होगा।

क्या विचार-शून्यता मन की आध्यात्मिक स्थिति है? एकाग्रता की सीमा तक, जो स्वयं में मन की एक अत्यन्त प्रबल अवस्था है, व्यक्ति भौतिक और आध्यात्मिक दोनों पक्षों पर ध्यान कर सकता है। पर एकाग्रता के भी परे जैसे-जैसे मन की शक्ति सूक्ष्मतर होती जाती है, उसकी दृष्टि आत्मा के जाज्वल्यमान् प्रकाश पर उत्तरोत्तर केन्द्रित होती जाती है। पदार्थ अब ऐसे मन को सीमित नहीं रख सकता, क्योंकि यह मन विचारों से रिक्त हो गया है। विचार पदार्थ है। जिस प्रकार आप किसी को अंगूठी देते हैं, उसी प्रकार आप एक विचार को भी दे सकते हैं और वापस ले भी सकते हैं।

विचार ही मन को पदार्थ की ओर भेजते हैं। आपके विचार कामनाओं और इच्छाओं से नियंत्रित होते हैं। इच्छा की सूक्ष्म, अनश्वर शक्ति, आसक्ति से उत्पन्न

होती है और आसक्ति आपके कर्मों का परिणाम है। आपके कर्म ही आपको विचार करने और उन विचारों का कार्यान्वयन करने को मजबूर करते हैं। यही प्रेरक शक्ति है। यदि आप यह जानना चाहते हैं कि आपको क्या उत्प्रेरित करता है तो सबसे पहले आपको अपने कर्म समझने पड़ेंगे।

इस समझ के साथ-साथ आपको कर्मों के साथ अपने सम्बन्ध का पुन: अवलोकन करना होगा। क्या आप कर्मों के कर्त्ता हैं? या आप भोक्ता हैं? क्या आप दोनों हैं, या फिर आप दोनों ही नहीं हैं? क्या इस सम्बन्ध में अकेले आप ही हैं या कोई और भी इस सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है?

जैसे ही आप कर्म और कर्मफल के अन्तहीन चक्र का सिद्धान्त समझने लगेंगे, आप अपने विचारों का पुनर्निर्माण शुरू कर देंगे। यह अपने आप ही बिना किसी प्रयास के होने लगेगा। उदाहरण के लिए, एक कसाई और एक वैद्य के लिए चाकू भिन्न प्रयोजन सिद्ध करता है। क्यों? उनके भिन्न कर्मों के कारण। तो फिर क्या उनके भिन्न विचार नहीं रहेंगे? आपके द्वारा किये गये कर्म आपके विचारों को प्रभावित करते हैं और इसी प्रकार आपके विचार कर्मों को।

विचार एक ताकत है। जिस प्रकार आप मुठ्ठी के प्रहार से या फिर मधुर मुस्कान से किसी को गिरा सकते हैं, उसी प्रकार आप विचार द्वारा भी किसी को गिरा सकते हैं। विचार शक्ति ऐसे सुदूर जगहों पर भी प्रेषित की जा सकती है जहाँ आप पहले कभी न गये हों। विचार की गति सबसे अधिक है, यहाँ तक कि प्रकाश की गति से भी। यदि आप विचार सम्प्रेषण करना जानते हैं तो आप अस्तित्व के सर्वोच्च लोक, सत्य लोक तक अपने विचार भेज सकते हैं जहाँ स्पन्दन अति सूक्ष्म और परिष्कृत होते हैं।

आप जो भी विचार सोचते हैं वह हिरण्यगर्भ में अंकित हो जाता है। समस्त ब्रह्माण्ड असंख्य विचारों की ध्वनि से गूँज रहा है। यदि आप यह जानते कि आपके सब फिजूल और बेमतलब के विचार ब्रह्माण्ड के इस विशाल अभिलेख कक्ष में कहीं-न-कहीं अंकित किये जा रहे हैं तो शायद आप दुबारा सोचते या यूँ कहिये कम सोचते! यदि आप ईमानदारी के साथ

और बिना अपने आपको ढील दिये अपने विचारों का दैनिक लेखा-जोखा रखेंगे तो उसमें बहुत कुछ आप पसन्द नहीं करेंगे और आश्चर्य करेंगे कि आप ऐसा भी सोच सकते थे। विचार ऊर्जा का प्रवाह है। कुछ तरह के विचार, जैसे, काम, क्रोध और घृणा अधिक मात्रा में ऊर्जा खर्च करते हैं, जिससे बाद में निस्तेजता और शक्तिहीनता का अनुभव होता है। यदि आप ऊर्जा की रक्षा करना चाहते हैं तो आपको सात्त्विक और सकारात्मक विचार सोचने चाहिए, न कि ऊर्जा का हनन करने वाले नकारात्मक विचार।

विचारों को नियंत्रित करने का एक सहज उपाय है—श्वास का नियंत्रण। प्रत्येक श्वास के साथ आप विद्युतीय आवेगों को अन्दर खींचते हैं जो आपके अन्दर गूँजकर विचारों की लहरें उत्पन्न करते हैं, जिन्हें आप रेचक के साथ आकाश में छोड़ते हैं। विचार जितना प्रबल होगा, वह उतने अधिक वेग के साथ आप पर लौटेगा और आपको अपने मुताबिक कर्म करने पर विवश करेगा। सनक क्या है? यह मन की ऐसी स्थिति है जब एक ही विचार बार-बार मन में आता रहता है और हर बार प्रबल होता जाता है। यह इस तथ्य का प्रमाण है कि श्वास, विचार और कर्म आपको किस प्रकार चक्रव्यूह में बाँधकर रखते हैं। ऐसी मनोवस्था वाले व्यक्ति को प्राणायाम और कर्म योग के समन्वयित अभ्यासों से बहुत राहत मिलेगी। प्राणायाम वह प्रक्रिया है जिसमें श्वसन को इस हद तक नियंत्रित किया जाता है कि श्वास को लम्बी अवधि तक रोकना संभव हो जाता है। इससे विचारों के क्रम में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, क्योंकि विचारों के प्रवेश और विकास का मार्ग ही बन्द हो जाता है।

निरन्तर अभ्यास से धीरे-धीरे यह क्षमता प्राप्त होती है कि हम वही सोचें जो हम सोचना चाहें। क्या आप कभी ऐसा कर पायें हैं? क्या आप कभी निर्णय लिये हैं कि अगले क्षण क्या सोचेंगे? प्राय: हम अपने मन को खुली छूट दे देते हैं। हम केवल उसका अनुसरण करते हैं और वही करते हैं जो मन कहता है। पर जो व्यक्ति अपने विचारों पर, और विचारों द्वारा मन पर, जरा भी नियंत्रण कर पाता है, वह दिव्य कान्ति से जगमगा उठता है।

संत का संयम

एक संत कहीं जा रहे थे। एक दुष्ट व्यक्ति उन्हें गालियाँ देता हुआ उनके पीछे-पीछे चल रहा था। संत ने उससे कुछ कहा नहीं, वे चुपचाप चलते रहे। किंतु जब कुछ घर दिखाई पड़ने लगे, तब वे खड़े हो गए और बोले, 'भाई, तुम्हें जो कुछ कहना हो, यहीं कह लो, मैं खड़ा हूँ। आगे के घरों में रहने वाले लोग मुझसे सहानुभूति रखते हैं, वे तुम्हारी बातें सुनकर तुम्हें तंग कर सकते हैं।' दुष्ट व्यक्ति लज्जित होकर क्षमा माँगने लगा।

सत्यम् वाणी

आज का युग उपयोगितावादी युग है। जो जिसके जितना काम आ जाए, उसे लोग उतना ज्यादा मानते हैं। जो किसी के काम का नहीं है, पड़ा रहे साठ-सत्तर साल, क्या फर्क पड़ता है। इंग्लैण्ड की राजकुमारी डायना को तो सब कोई जानते हैं। राज परिवार ने उसे बहिष्कृत कर दिया और संसार ने उसे सर-माथे पर रख लिया। यह आज के सामान्य व्यक्ति की मर्यादा है। दुनियाभर के लोग उस राजकुमारी का उतना ही आदर करते हैं जितना शायद यहाँ सती-सावित्री का करते हैं। यह इस युग की मर्यादा है जिसमें किसी पुरुष या स्त्री के चरित्र को लोग अपने दृष्टिकोण से परखते हैं।

तुम बड़े हो, अपने लिये बड़े हो। तुम पवित्र हो, अपने लिये हो, हमें तो तुमसे कोई फायदा नहीं। आज का आदमी हर चीज को लाभ-हानि की तुला पर तौलता है। व्यापार से, समाज से, रिश्ते-नातों से, सब से फायदा चाहता है। जो रिश्ते, जो नाते, जो परम्पराएँ आज उस व्यक्ति के किसी भी प्रकार काम आती हैं, वे उसके लिये स्वीकार्य हैं। वर्त्तमान युग उपयोगितावाद और व्यावहारिकता का है। मैं समझता हूँ आदमी हमेशा व्यावहारिक ही रहा है। जिसे तुम आदर्शवाद कहते हो वह वास्तव में एक सामाजिक अवरोध है, जैसे गाड़ी में ब्रेक। ब्रेक हमेशा लगाने के लिये नहीं होता, जब जरूरत होगी तब लगायेंगे। हमेशा लगाओगे तो गाड़ी चलेगी नहीं। आदर्शवाद का तभी उपयोग होता है जब उसकी आवश्यकता हो, अन्यथा कुछ न बोलो, शान्त रहो। इसका उपयोग मत करो। आदर्शवाद को लेकर हिन्दुस्तान में कुछ गलतियाँ हुईं हैं।

युद्ध के पीछे आर्थिक कारण

समाज और संसार में लड़ाई जरूरी नहीं है। लड़ाई होती है क्योंकि उससे कुछ लोगों को फायदा होता है जो लड़ाई को एक उद्योग के रूप में देखते हैं। वे युद्ध को एक राजनीतिक निर्णायक के रूप में नहीं, बल्कि एक उद्योग के रूप में देखते हैं। कौन जीतेगा, किसकी हार होगी, कौन राजा बनेगा, इससे उन्हें कोई मतलब नहीं। हमारे कितने बम बिकेंगे, कितना अनाज बिकेगा, कितनी सिगरेट बिकेगी, कितना कपड़ा बिकेगा, कितना चमड़ा बिकेगा, इससे मतलब रहता है। हमें कितने हवाई-जहाज, कितने युद्धपोत बनाने पड़ेंगे, यह काम की चीज होती है। उस वक्त बाज़ार मंदी से उठ जाता है। इसीलिए तो लड़ाइयाँ होती हैं।

यह बात याद रख लो कि महायुद्ध तभी होते हैं जब किसी शक्तिशाली साम्राज्य की अवनति होने लगती है, वहाँ के बाज़ार में मन्दी आने लगती है। आज अमेरिका

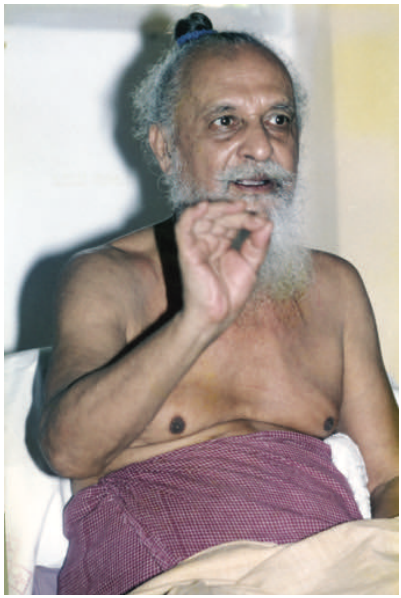

एक बड़ा साम्राज्य है। किसी जमाने में ब्रिटेन बड़ा साम्राज्य था। जब वहाँ आर्थिक मन्दी होने लगती है तो समाज चौपट होने लगता है। तुम्हारा माल बिक नहीं रहा है, तो तुमको पैसा नहीं आ रहा है। माल तैयार होकर पड़ा हुआ है गोदाम में। उस पर टैक्स पर टैक्स भरते जाओ। माल बनता है, बिकता नहीं क्योंकि माँग नहीं है। मकान नहीं बन रहे हैं, मजदूर बैठे हैं। पाव-रोटियाँ सड़ रही हैं। उसको कहते हैं मन्दी, रिसेशन। उस वक्त मंदी से बाहर आने के लिये युद्ध रचे जाते हैं। लड़ाई तो आर्थिक सन्तुलन के लिये की जाती है, ऐसे ही थोड़ी होती है।

तो महाभारत के समय भी ऐसा ही हुआ था क्या?

महाभारत के समय ऐसा कुछ हुआ होगा, कोई जरूरी नहीं। पुराने जमाने में लड़ाइयाँ राज्य और अधिकार के लिये लड़ी जाती थीं। जिस आर्थिक सिद्धान्त की बात हम कर रहे हैं, वह उस वक्त नहीं था। यह सिद्धान्त तो पिछले तीन-चार सौ साल का है। लोग लड़ाइयाँ करते थे केवल सम्पत्ति बटोरने के लिये या अपनी सम्पत्ति को सुरक्षित रखने के लिये।

लड़ना मनुष्य की मूल प्रवृत्ति नहीं है। लड़ना किसी को पसन्द नहीं, पर सामाजिक कारणों से, आर्थिक कारणों से और इन्सान के अन्दर जो दिमाग है, उसकी वजह से लड़ाइयाँ होती हैं। लड़ाइयाँ करवाई जाती हैं। अमेरिका अपनी जमीन पर लड़ाई नहीं चाहता, इसलिये लड़ाइयाँ पूर्वी यूरोप की तरफ रखता है, अपनी तरफ लड़ाई को आने नहीं देता। इंग्लैण्ड ने लड़ाई की, उसका सूर्य अस्त हो गया। जितने भी राज्य लड़ने और जीतने के लिये गये वे अपने दरवाजे पर लड़ाइयों को नहीं संभाल सके, खत्म हो गये, क्योंकि युद्ध में बहुत नुकसान होता है। एक आदमी पाव भर खाना खाता है, मगर एक सैनिक एक मन खाना खाता है। उस हिसाब से राशन दिया जाता है। जब मैदान-ए-जंग में राशन जाता है तो एक हजार लोगों के लिये एक हजार पाव नहीं जायेगा, एक हजार मन जायेगा। अब सिगरेट एक सैनिक के पीछे दस जायेगी क्योंकि वहाँ नुकसान भी होता है, छोड़कर भागना पड़ता है। वह सब उसमें जोड़ा जाता है। सैनिकों का कोटा आपके कोटे से कई गुना ज्यादा होता है।

सैनिक मरता है तो उसकी पत्नी विधवा हो जाती है, बच्चे अनाथ हो जाते हैं, जिसका दोष सरकार को लगता है। जो अच्छी सरकार है वह किसी-न-किसी तरह से लड़ाई को टालेगी। इसलिये हमेशा कहा जाता है कि भाई लड़ो मत, बातचीत के द्वारा कोई रास्ता निकालो। हाँ, बातचीत से जो हल निकलता है उसमें समय जरूर लगता है। जैसे हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की समस्या है, पचास साल हो गए हैं, पाँच पीढ़ियाँ बदल गई हैं। कोई बड़ी बात नहीं है। पाँच-दस और पीड़ियाँ निकल जाने दो, सारा माहौल बदल जाएगा। बातचीत में समय लगता है जबकि लड़ाई में आधे घण्टे में सब निश्चित हो जाता है। लड़ाई में दोनों तरफ नुकसान होता है। एक जहाज गया तो करोड़ों रुपयों का नुकसान होता है।

स्वामीजी, पुराने जमाने में जो बड़ी लड़ाइयाँ होती थीं, जैसे महाभारत या राम-रावण युद्ध, उनमें इतने सारे लोग मरते थे तो क्या पूरा मैदान मृतकों से भरा रहता होगा? तब हाथी-घोड़े कैसे चलते थे, या कोई तरीका था मृतकों को हटाने के लिये?

देखो जी, हर युग में सरकार के अलग-अलग नियम होते हैं। एक नियम तो यह कि सरकार लड़ाई में भाग नहीं लेती है। लड़ाई में भाग लेती है सेना और राजा। सरकार तो एक तंत्र या व्यवस्था होती है। सचिव, कलेक्टर, तहसीलदार—सरकार इसको कहते हैं और यह सरकार लड़ाई में कभी भाग नहीं लेती है। जब लड़ाई होती है तो यह पीछे से इन्तजाम करती है, राशन भेजती जाती है, तम्बाखू-सिगरेट, मक्खन, दूध, मांस, मसाला सब भेजती जाती है। जो मरते हैं उनको ले भी जाती है। इलाज भी करती जाती है।

अब रामायाण-महाभारत के वक्त भी सरकार उतनी सक्षम रही हो, यह तो हम नहीं कह सकते हैं। हाँ, यह नियम पहले भी था कि घायलों को जो लोग उठाते हैं उनके ऊपर हमला नहीं होता था। इसका वर्णन रामायण में आता है। डाकिनी, बेताल और पिशाच मरे हुये या घायल लोगों को ले जाया करते थे। यह सब लिखा है मगर हम उसका दूसरा मतलब लगाते हैं। बेताल का मतलब लगाते हैं कि बड़े दाँत हैं, सींग हैं। डाकिनी-शाकिनी को डरावनी औरत समझते हैं। पर ऐसा नहीं है। ये उस वक्त के पद और दायित्व थे, जैसे आजकल नर्स या हेडनर्स कहा करते हैं। बस इतना ही फर्क है।

महाभारत में उल्लेख है कि भीष्म पितामह ने एक ही दिन में दस हजार लोगों को मारा। इतनों को उठाना कैसे सम्भव है? यह समझ में नहीं आता।

हमलोगों के देश में एक परम्परा रही है। इतिहास को इतिहास की तरह नहीं लिखते हैं। इतिहास को इतिहास की तरह लिखने से क्या होगा? आगे की पीढ़ियों में तुम्हारा

और हमारा मेल कभी नहीं हो सकता। वह याद बनी रहेगी। इसलिये इतिहास को हमारे यहाँ पुराण के रूप में लिखते हैं। पुरा का मतलब होता है पुराना समय या जमाना, ण का मतलब होता है जानकारी। एक जमाने की जानकारी, यह हुआ पुराण का शाब्दिक अर्थ।

पुराणों की भाषा-शैली में दो विशेष अलंकार मिलाते हैं—एक अतिशयोक्ति अलंकार और दूसरा भयंकर अलंकार। अलंकार माने जैसे तुम गहना-जेवर पहनते हो तो अच्छे दिखते हो, बिन्दी लगाते हो तो अच्छा दिखता है। जैसे स्त्री को आकर्षक बनाने के लिए उसे अलंकार दिए जाते हैं, वैसे ही कथा को रोचक बनाने के लिये यथार्थ को आधार बनाकर उसमें अतिशयोक्ति और भयंकर अलंकार, ये दो चीजें जोड़ी जाती हैं। इसलिए दस हजार आदमी का हजार लगा दो। यह तुम्हें सब जगह मिलेगा। यह इसलिए किया गया ताकि आज पढ़ने वाले का दिमाग इस तरह से चले कि उसमें किसी भी तरह से दुर्भावना न हो।

आज अगर हम पचास साल पहले का इतिहास याद करें, हिन्दुस्तान के लोग कैसे पाकिस्तान भागे थे, पाकिस्तान के लोग कैसे भारत भागे थे, उनके बच्चों, औरतों, मर्दों के साथ कैसा व्यवहार हुआ था, उसका विवरण एकदम यथार्थ भाषा में लिखेंगे तो सौ साल बाद भी लोग याद करेंगे। इसी को अगर एक कथा या आख्यान के रूप में रखोगे तो सारे का सारा जोर यथार्थ से हटकर अतिशयोक्ति में चला जाता है। इसलिये हमारे यहाँ इतिहास को हमेशा पुराणों का रूप दिया गया है। हमलोगों के पुराण एक तरह के इतिहास ही हैं।

अब देखो, छोटी-सी बात तुम्हें बताऊँ। आज यूरोप और अमेरिका बहुत मालदार देश हैं, वहाँ बहुत बड़े उद्योग हैं, बड़ी कम्पनियाँ हैं। उनके बाज़ार पूरी तरह सैचूरेट हो गए हैं, भर गए हैं। अपनी अर्थव्यवस्था को बनाए रखने के लिए उन्होंने कृत्रिम बाज़ार तैयार किया है। कृत्रिम बाज़ार क्या है? ये सब डिज़ाईनर टेक्सटाईल, डिज़ाईनर जूते, नये प्रकार के साबुन—यह कृत्रिम बाज़ार है। लोगों का ध्यान कई प्रकार के जूतों में, कई प्रकार के शैम्पू में जाता है, बिक्री होती है। पर यह कृत्रिम बाज़ार भी भर चुका है। अब क्या करेंगे? दूसरे देशों में जायेंगे बेचने के लिये। वहाँ बाज़ार खोलेंगे। बीस-तीस साल के बाद तुम देखोगे उन देशों के पास हथियार रहेंगे, जबर्दस्त टेक्नॉलॉजी रहेगी।

कल्पना करो, बीस-तीस साल के बाद जब इनके पास टेक्नॉलॉजी आ जायेगी तो क्या करेंगे। वही हाल होगा जो एक जमाने में पुराणों में लिखा है कि राक्षस लोगों ने देवताओं पर हमला किया और इन्द्र को अमरावती से भगा दिया। उसने ब्रह्मा, शिव और विष्णु से जाकर कहा, आपने ब्रह्मास्त्र, पाशुपातास्त्र और नारायणास्त्र जैसे हथियार दिये हैं, अब हमें बचाइये आप। ब्रह्मा, विष्णु, शिव बोले—भारत में जाओ, वहाँ राम जी ने जन्म लिया है, कृष्ण जी ने जन्म लिया है, वे ही इन सब

को ठीक कर सकते हैं। वह समय आने वाला है। भारत की संस्कृति अभी भी एक सौम्य संस्कृति है। सारे राष्ट्र इस बात को जानते हैं कि भारत सौम्य देश है। ठीक है, माना कि हिन्दुस्तान गरीब है, निरक्षर है, मगर सब लोग भारतीयों के मनोविज्ञान को गंभीर मनोविज्ञान मानते हैं। एक दिन यही यूरोपियन राष्ट्र, यही पाश्चात्य देश हिन्दुस्तान के पास मदद माँगने के लिये आयेंगे। या तो इतिहास स्वयं को दोहराता है, या यूँ कहो, पुराणों में जो भविष्यवाणियाँ लिखी हैं, वही हो रहा है। पुराणों में कहा है कि संस्कृति तीन तरह की होती है, मानवी, दैवी और आसुरी। मानवी और आसुरी संस्कृति का मतलब तो जानते हो। रही बात देवताओं की, देवता लोग तो भोग प्रेमी होते हैं, *देवा: भोगप्रिया:।* पाश्चात्य संस्कृति में बढ़िया खाना, बढ़िया पीना और भोग विलास नहीं है क्या? ये उसी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं।

व्यक्तिगत जीवन में भी कुछ चीजें अपने आप को दोहराती प्रतीत होती हैं। इसका क्या कारण है?

प्रकृति का नियम है कि तुम्हारे पास अगर शक्ति और सत्ता आती है तो अहंकार भी आ जाता है। उस दम्भ और घमण्ड के कारण तुम्हारा पतन होता है, फिर तुम दुबारा खड़े होते हो, पुन: शक्तिसंपन्न होकर पुरानी स्थिति को फिर से भूल जाते हो। आदमी पैदा होता है, जवान होता है, बूढ़ा होता है, मरता है, फिर पैदा होता है। यही दुनिया का चक्कर है। इसलिए कहते हैं कि इतिहास स्वयं को दोहराता है। आप कहते हैं जीवन भी स्वयं को दोहराता है, मैं कहता हूँ कि यह बार-बार का दोहराना ही तो जीवन है। *पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम्*–वह तो बार-बार होता है। जन्म लेना, फिर मरना, फिर दुबारा माँ के पेट

में आना, यह पुनरावृत्ति तो होगी है। यह प्रकृति का नियम है और प्रकृति हमेशा रिसाईकलिंग करती है, चक्र में चलती है।

पत्ते आते हैं, झड़ते हैं, खाद बनती है, फिर उसी से नए पत्ते आते हैं। हर साल वही ऋतुएँ आती हैं, जाड़ा, बसंत, गर्मी, बरसात, फिर जाड़ा। दिन के बाद रात, रात के बाद दिन। यह दुनिया का चक्कर है। पुनरावृत्ति तो सब जगह है। केवल इतिहास में नहीं, जीवन में पुनरावृत्ति है, मौसम में पुनरावृत्ति है। प्रकृति के कलेवर में पुनरावृत्ति है। पानी मेघ बनता है, फिर मेघ से पानी बरसता है। आदमी पैदा होता है, बड़ा होता है, फिर मरता है। यदि यह दुनिया चक्कर है तो इस चक्कर से बाहर निकलें कैसे? उसी चक्कर में जाना पड़ता है। सीधा रास्ता हो तो कहीं से निकल जायें, पर चक्कर से बाहर तो कोई रास्ता है ही नहीं। शंकराचार्य जी कहते हैं, *इह संसारे बहुदुस्तारे कृपयापारे पाहि मुरारे*–हे प्रभु! बस आपकी कृपा हो तो इसके बाहर निकल जायेंगे।

इतिहास को जब लोग इतिहास के रूप में जानते हैं तो दो साम्राज्यों या दो जातियों के बीच में जो झगड़े हुए होते हैं वे शताब्दियों तक उनके दिमाग में रहते हैं। इसलिए हमारे यहाँ इतिहास को पुराण के रूप में बताया जाता है। तब उसमें वृत्तांत बदल जाते हैं और लोग तब उसे केवल मनोरंजन के लिये लेते हैं।

स्वामीजी, भीष्मपितामह पर अर्जुन ने इतने तीर चलाये, फिर तीरों पर वे इतने दिन लेटे रहे। इसके पीछे कोई गूढ़ अर्थ है या ऐसे ही बढ़ा-चढ़ा कर लिखा है?

अगर हम दौ सौ बड़ी-बड़ी कीलें लेकर तुम्हारे शरीर में घुसा दें, फिर जब निकालेंगे तो मर जाओगे न? किसी पर अगर छुरा मारा जाता है तो जब तक वह डॉक्टर के पास नहीं जाए तब तक छुरा निकालना नहीं। नहीं तो सब खून निकल जायेगा, वह तुरन्त मर जायेगा। छुरा खून को रोकता है। आदमी खून के निकलने से मरता है। किसी की आँत फट गई, किसी का कलेजा फट गया, उससे कुछ नहीं होता है, जब उसका खून सब निकल जाता है तब मृत्यु हो जाती है।

तो इसका मतलब ईसा मसीह निश्चित रूप से सूली पर नहीं मरे थे?

ईसा मसीह की मृत्यु वहाँ नहीं हुई है, पक्की बात है। उनके हाथों में कीलें ठोंकी गईं, यह भी निश्चित है, पर वे मरे नहीं, क्योंकि हाथ और पैर मर्मस्थान नहीं होते। शरीर में जो मर्मस्थान हैं वहाँ पर चोट लगने से आदमी मरता है, मगर जो मर्मस्थान नहीं हैं वहाँ पर चोट लगने से आदमी तब मरता है जब वहाँ से रक्त का प्रवाह नहीं थमता। उन्हें तीन दिन के बाद नीचे लाया गया, जख्म सूख गये थे। जहाँ तक मरने का सवाल है हमने देखा है समाधि वगैरह में नब्ज बिलकुल गायब रहती

है। जो जड़ समाधि लगाते हैं, उनमें प्राणायाम से नब्ज एकदम थम जाती है, फिर भी आदमी बाहर निकल आता है। जब उसे ऑक्सीजन मिलती है वह जीवित हो जाता है। कई लोगों को देखा है जो भू-समाधि लगाते हैं, जड़ समाधि लगाते हैं, डॉक्टर लोगों ने उनका नाड़ियाँ चेक कीं, हृदय चेक किया, बिल्कुल मृत घोषित कर दिया, पर वे दुबारा जीवित हो गए।

इसी तरह ईसा मसीह को भी मृत घोषित करके सैनिक लोग वहाँ से चले गए होंगे। बाद में औषधियों से उनका उपचार किया गया। उन्हें वहाँ से चुपचाप इटली होते हुये ईराक लाये, बाद में वे पूर्व की ओर आए। जब हिन्दुस्तान आये तो कश्मीर से होते हुये आए और वहीं रुक गये। कश्मीर वैसे भी सुन्दर जगह थी। उस समय वे तीन लोग थे जिनका उल्लेख मिलता है। एक तो वे स्वयं, उनकी माता मरियम और मित्र, मेरी मेग्दलीन। ये तीन लोग कश्मीर पहुँचे, शायद अन्य लोग भी रहे होंगे। श्रीनगर में जो मजार है वह मरियम की मजार है। वह अभी भी है और हमने देखी है। श्रीनगर के बाहर गंदरबल की तरफ एक गाँव है, वहाँ ईसामसीह की मजार है, जिसे दो नामों से पुकारते हैं—ईसु आसफ और नबी आसफ। उसका रखवाला मुसलमान है, और उसके पास पुलिन्दे हैं जिनमें सब लिखा है। यहाँ तक बात स्पष्ट है।

ये सब बातें सुनने के बाद कई विदेशी विद्वान् वहाँ गए हैं, किताबें छप चुकी हैं, तस्वीरें छपी हैं। उससे पुलिन्दा माँगा है पर वह अपने धर्म का पक्का है, नहीं दिया है। जो कुछ भी जानकारी उपलब्ध हो सकी उसके आधार पर एक पुस्तक 'एक्वेरियन बाईबिल' लिखी गई है, जिसमें क्राइस्ट की पूरी जीवनी लिखी है। बहुत मशहूर पुस्तक है। इस पुस्तक में लिखी सब बातों का पता कैसे चला? कुछ सैलानियों को डेड सी के किनारे गुफाओं में कुछ दस्तावेज मिले जो अरैमिक भाषा में लिखे हुए थे। उस समय यही भाषा प्रचलित थी और ईसा मसीह उसी भाषा में बोलते थे। जब उन्हें सूली पर चढ़ाया गया तो उन्होंने जो कहा था, 'भगवान, आपने मुझे क्यों त्याग दिया' वह अरैमिक भाषा में था। यह यहूदियों की स्वाभाविक भाषा नहीं जो आजकल ये लोग बोलते हैं। सैलानियों ने वे दस्तावेज़ जर्मनी में बेच दिये। वहाँ पढ़े-लिखे लोगों ने उन पर शोध करना शुरू कर दिया। एक विभाग ही खुल गया, 'रिसर्च ऑन डेड सी स्क्रोल्स'। उसका यही नाम है। हम जो बोल रहे हैं उसका आधार ये दस्तावेज़ हैं।

ऐसा कहा जाता है कि ईसा मसीह के जन्मस्थान के नजदीक कुछ पीढ़ियों पहले एसेनी सम्प्रदाय का एक मठ था। उसमें इस सम्प्रदाय के ब्रह्मचारी और बुजुर्ग लोग रहते थे। ईसा मसीह के पैदा होने के करीब पचास साल पहले वे लोग आश्रम बन्द करके चले गये, आश्रम वीरान हो गया। उसका कोई वृत्तान्त नहीं मिला। ईसा मसीह के पैदा होने के पाँच साल पहले एसेनी सम्प्रदाय के लोग वापस आकर बसे। अब

वही थे या दूसरे थे, पता नहीं, मगर वह सम्प्रदाय फिर वहाँ आ गया। ईसा मसीह बचपन से वहाँ जाते थे और उन्होंने वहाँ सब सीखा जो सीखना चाहिए था, मतलब अध्यात्म विद्या। अध्ययन के दौरान एक ऐसा समय आया जब उनके शिक्षकों ने कहा कि इससे ज्यादा हम तुमको नहीं सिखा सकते। अगर तुमको ज्यादा सीखना हो तो भारत चले जाओ, वहाँ इसके ज्ञाता लोग हैं। तब ईसा मसीह भारत आये, कश्मीर पहुँचे। पहले वहाँ अध्ययन किया, फिर वाराणसी गये, वहाँ रहे, अध्ययन किया और पुरी भी गये। उन्होंने पुरी में रथ-यात्रा देखी। अब पुरी की रथ-यात्रा कितनी पुरानी है अन्दाज लगा लो।

वे दस-ग्यारह साल भारत में रहे। एक-दो साल आने-जाने में लगे होंगे और फिर वापस गये इस्रायल। बाईबिल में भी जो वृत्तान्त है उसमें इन तेरह सालों का कोई उल्लेख नहीं है। वे जब यहाँ से वापस गये तो उन्हें सिद्धियाँ थी—बीमार को ठीक कर सकते थे, मरे हुए को जिला सकते थे, अन्धे को आँख दे सकते थे। फकीर की तरह एकान्त में रहते थे, मौन धारण करते थे, व्रत करते थे, सब लिखा है। चेला बनाते थे, जिसमें हम लोग निपुण हैं।

उन्होंने वहाँ क्या सिखाया? जब वे यहाँ आये उस वक्त यहाँ दो मुख्य विचारधारायें चल रही थीं, एक वैष्णव और दूसरी बौद्ध। बौद्ध धर्म आचार-प्रधान धर्म है और वैष्णव भक्ति-प्रधान धर्म है। उन्होंने वहाँ यही सिखाया। ईसाई धर्म में यही दो चीजें तो हैं। बौद्धों की आचार-संहिता और वैष्णवों की भक्ति-संहिता,

जिसमें रामानुजाचार्य जैसे महात्माओं ने भगवान के बारे में कहा है। भगवान दयालु हैं, भगवान की सत्ता के बिना पत्ता भी हिल नहीं सकता, सारा जीवन भगवान के लिये अर्पण करो। वे भी कहते थे कि तुम चिन्ता क्यों करते हो, भगवान तो हैं न तुम्हें देखने के लिए। बीमार हो, भगवान चाहेंगे तो ठीक होगे, नहीं चाहेंगे तो बीमार रहोगे। वे हर चीज में भगवान को घुसा देते थे। भक्ति तो यही कहती है न? भक्ति में तो खाना-पीना-सोना, सब कुछ भगवान के हाथ में है। जब ईसा मसीह लोगों को यह सब सिखाने लगे तो यहूदी बिगड़े, कहा, 'यह क्या नई चीज सिखाता है, अपना धर्म तो सिखाता नहीं, दूसरों का धर्म सिखाता है।' बस उन्हें दण्ड दे दिया गया। यह काफी लम्बी कहानी है।

भगवान को याद करते समय मन भागता क्यों है?

देखो जी, जब सूर्य निकल आता है तो अन्धकार क्यों भागता है? इसलिए कि दोनों का एक-दूसरे के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। मन तो हमेशा भागेगा ही। अगर तुम यह सोचो कि मन भागे नहीं, स्थिर हो जाए, निश्चल हो जाए, एक जगह टिक जाए तो तुम एक असम्भव बात सोच रहे हो। मन का स्वभाव चंचलता है। जिस तरह हनुमान जी के मन्दिर पर टंगी ध्वजा हवा के रुक जाने पर भी हिलती रहती है, उसी तरह से कितना भी तुम्हारे मन से काम, क्रोध, लोभ, मोह, इच्छा, द्वेष, आसक्ति खत्म हो जाये, भगवान पर मन लग भी जाये तो भी मन चंचल रहेगा। इसलिये मन को स्थिर करने का प्रयत्न बेकार है। मन से लड़ने का मतलब हुआ कि जैसे एक छोटा बच्चा हाथी की पूँछ को खींचे। भगवान में मन लग जाये, भगवान का नाम लेने में आनन्द आ जाये, भगवान की पूजा में समय कट जाये, यही लक्ष्य होना चाहिये। मन भागता रहे, भागने दो। अरे! जब तुम अपने पति या बच्चों के लिये खाना बनाती हो तो मन एकाग्र होता है क्या? पचास बार तो कुछ-न-कुछ सोचती हो मगर खाना तो स्वादिष्ट ही होता है और बन भी जाता है। मन के चंचल होते हुये जब खाना स्वादिष्ट बन सकता है, तो वैसे ही मन के चंचल होते हुये भगवान के प्रति प्रेम जागृत नहीं हो सकता है क्या?

आनन्द तो आता है!

तुम दो चीजें चाहो कि आनन्द भी आये और मन भी रुक जाये, यह हो नहीं सकता क्योंकि मन रुकेगा तो आनन्द खत्म हो जायेगा। आनन्द मन की अनुभूति का नाम है। जिस आनन्द के बारे में तुम बोल रहे हो वह मन की ही अनुभूति है, मन को ही अनुभव हो रहा है। यह मन जो हमशा इधर-उधर भटकता है वह भगवान के नाम में मौज लेता है, आनन्द ले लेता है, यही काफी नहीं है क्या? और जब इतना काफी है तो बाकी की बात मत पूछो।

क्या कारण है कि सतयुग, त्रेता या द्वापर युगों के केवल राम-रावण युद्ध और महाभारत ही हमलोगों को मालूम हैं या प्रसिद्ध हैं? वैसे तो शिव जी ने या देवी जी ने भी इतनी लड़ाइयाँ लड़ीं, फिर वे इतनी प्रसिद्ध क्यों नहीं?

महाभारत की लड़ाई गृहयुद्ध था, और गृहयुद्ध का होना किसी भी राष्ट्र के लिये विध्वंसक हो सकता है। बाहर का आदमी तुमसे लड़े दूसरी बात है, पर घर के अन्दर आपस में लड़ाई हो तो राष्ट्र बिखर जाता है। हिन्दुस्तान की आज जो हालत है उसका कारण है गृहयुद्ध। महाभारत युद्ध के समय अधिकांश राजा कौरवों के साथ थे। बस पांचाल के राजा उनके साथ नहीं थे। जब कौरव हारे तो वे सब लोग देश छोड़कर चले गये। यह तो हमेशा होता है, हर गृहयुद्ध के बाद पलायन होता है। आयरलैण्ड के लोगों को आज भी याद है कि हमारे पूर्वज महाभारत के बाद भाग कर आये थे, वे लोग जानते हैं। ऐसे ही मध्य एशिया, दक्षिण पूर्वी एशिया और अफ्रीका की तरफ भी समुद्र के मार्ग से गये हैं। बहुत बड़ी संख्या में भारत से जन पलायन हुआ। केवल आम जनता का पलायन नहीं, बल्कि विचारकों, लेखकों, कारीगरों, राजनीतिज्ञों, अधिकारियों, वैज्ञानिकों और वैद्यों का बहुत बड़ी संख्या में पलायन हुआ। करोड़ों की संख्या में हिन्दुस्तान से लोग भागे, जो हर गृहयुद्ध में हमेशा होता रहता है। ताजा उदाहरण लो, पाकिस्तान-हिन्दुस्तान के बटवारे में करोड़ों इधर-से-उधर हो गये न।

लोगों को याद दिलाया जाए कि गृहयुद्ध नहीं होना चाहिये, इसलिये महाभारत की कथा को इतना महत्त्व दिया गया है। अन्यथा पुराणों में 18 मुख्य पुराण हैं और 18 उपपुराण हैं। उन सब में तो अनेकों लड़ाइयों का वर्णन आता है। देवताओं और राक्षसों के बीच तो बराबर लड़ाइयाँ होती रही हैं, मगर उनमें हमारे राष्ट्रीय हित की कोई बात नहीं थी। वे लड़ाइयाँ दूसरों की थीं। उनसे हमें कोई मतलब नहीं था। अगर मतलब था भी तो इतना कि जब देवताओं और असुरों के बीच लड़ाई हुई तो दशरथजी को बुला लिया या मान्धाता को बुला लिया सहायता के लिये। बस इतना ही उल्लेख मिलता है, मगर उसका सीधा प्रभाव हमारे समाज पर पड़ा हो, ऐसा नहीं है। जबकि महाभारत का असर सीधे हमारी सामाजिक व्यवस्था और अर्थव्यवस्था पर पड़ा। शिक्षा देने वाली संस्थाएँ, चिकित्सा करने वाली संस्थाएँ, हमारे समाज में तो कई प्रकार की संस्थाएँ होती हैं, वे सब खत्म हो गईं। जैसे आतंकवाद से पंजाब में गाँव के गाँव टूटे पड़े हैं। जो लोग वहाँ से आते हैं बताते हैं। मन्दिर टूटे पड़े हैं, स्कूलों को तोड़ दिया है। कश्मीर में अपरोक्ष लड़ाई चल रही है, कितने स्कूल, कॉलेज, यूनिवर्सिटी, अस्पताल टूट गये, पूरा सामाजिक ढाँचा ही चरमरा गया। कश्मीर की हालत अच्छी नहीं है। उसको पुनर्जीवित करने के लिये अरबों-खरबों रुपये लगेंगे, दसों साल लगेंगे।

भगवान का अवतरण

जब श्रीकृष्ण का अवतार हुआ तो उन्हें मालूम था कि वे अवतार हैं। उन्हें जो ईश्वरीय आदेश मिला था, वह उन्हें बकायदा याद था। और सुनते हैं कि जब श्री राम का अवतार हुआ तो उन्हें मालूम नहीं था कि वे अवतार हैं। इसलिये वे सीता जी के अपहरण के समय रोने लगे, सीता जी के विरह में व्याकुल हो गये और उस व्याकुलता से पराभूत होकर उन्होंने रावण का विनाश ही कर दिया। वहाँ से लौटने के बाद सीता जी की उन्होंने अग्नि परीक्षा भी करवा दी और लोगों के कहने से उनका त्याग भी कर दिया, क्योंकि उन्हें मालूम नहीं था कि वे अवतार हैं।

अवतार प्रत्यक्ष और प्रच्छन्न दोनों होते हैं, फिर स्थायी और अस्थायी भी होते हैं। नृसिंह का अवतार हुआ, हिरण्यकश्यप का वध किया और गायब हो गये। हर युग में अवतार की आवश्यकता तो पड़ती ही है, किन्तु अवतार विशेष कारणों से ही होते हैं। अब इस युग में क्या कारण है जिसे लेकर कोई अवतार आये? ऐसा तो कोई कारण हमें नहीं लगता। कोई भी विचारक, कोई भी सामान्य व्यक्ति इस बात को बोल सकता है कि पिछले पचास वर्षों में धर्म और अध्यात्म में रुचि रखने वालों की संख्या बढ़ी है, घटी नहीं है। मन्दिर में पूजा करने वालों, साधु-महात्माओं के सत्संग में ज्ञान की बात सुनने वालों, कीर्तन-भजन-आत्मचिन्तन करने वालों, दीक्षा और संन्यास धारण करने वाले लोगों की संख्या बढ़ी है, घटी नहीं है। जब धार्मिक चीजें बढ़ रही हों तो फिर अवतार किसलिये? अब रही बात कि समाज में कुरीतियाँ हैं, बुराइयाँ हैं, आचारहीनता है, संस्कारहीनता है, यह सब मानते हैं, परन्तु क्या आप यह नहीं देखते कि पिछले पचास वर्षों में इनके विरोध में आवाज

अधिक उठी है। कानून में व्यापकता आ रही है। लोगों की राजनैतिक विचारधारा में व्यापकता आ रही है।

पहले एक बेईमान को बुरा माना जाता था, आज बेईमान एक उपाधि है?

पहले के जमाने में कोई बेईमानी नहीं करता था। सभी जरूरी चीजें बहुत सस्ती थीं, पैसा महँगा था, पर पैसे को तो कोई नहीं खाता। आदमी तो दाल-चावल खाता है, कपड़ा पहनता है, रुपया तो नहीं पहनता। आज रुपया सस्ता हो गया तो चीजें महंगी हो गई हैं। इस वजह से आदमी में बेईमानी परिस्थितिवश हुई है, उसके संस्कारवश नहीं हुई है। आप संस्कारों के कारण बेईमान नहीं हैं। परिस्थितियों ने आपको बेईमान बनाया है। आप झूठ नहीं बोलते हैं, न बोलना चाहते हैं, मगर परिस्थितियाँ आपसे झूठ बुलवा रही हैं। ये परिस्थितियाँ समाज की देन हैं जो समाज के बदलने से बदल सकती हैं। और समाज को बदलने के लिये अवतार का आना ऐसा ही है जैसे कि हाथी से हल चलवाना या मच्छर को तोप से मारना।

हाँ, आज अवतार आए तो केवल एक वजह से। आज आदमी भक्त हो गया है, मन्दिर में भी जाता है, सत्संग में भी जाता है, पूजा-पाठ भी करता है, उसको भगवद्-कृपा भी प्राप्त होती जाती है, मगर उसके मन में एक सन्देह है—क्या सचमुच में भगवान है? मनुष्य के मन में ईश्वर के अस्तित्व के प्रति कणमात्र भी सन्देह नहीं होना चाहिये। जैसे नींबू की एक बूँद सारे दूध को फाड़ देती है वैसे अविश्वास की एक बूँद मनुष्य के सारे विश्वासों के महल को गिरा देती है। इसलिए ऐसे समय में अवतार की आवश्यकता है, और यह भी सच है कि हर युग में अवतार आते हैं। दो साल पहले गणेश जी ने दूध पीया था। अब गणेश जी हिन्दुस्तान में दूध पीते तो मान लेते कि हिन्दुस्तानी गणेश जी दूध पी रहे हैं। पर मेरे पास तो ढाई सौ फैक्स आये, टेलिफोन पर टेलिफोन आये। पहले तो मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है। पहले दिल्ली से, फिर धनबाद, कलकत्ता, इंग्लैण्ड, जर्मनी, अर्जेन्टीना से खबर आई कि गणेश जी दूध पी रहे हैं! यह घटना ऐसी ही है जैसे ईसा मसीह के जन्म के समय आसमान में तारे का चमकना या बुद्ध के अवतार लेते समय कमलों का खिलना। राम जी के वक्त तो 'जा दिन तें हरि गर्भहिं आए, सकल लोक सुख संपति छाए।' जब भगवान राम माता के गर्भ में आए तो सारे संसार में सुख और कुशल-मंगल था।

हर अवतार के वक्त एक लक्षण की उत्पत्ति होती है। गणेश जी का दूध पीना एक सूचना है, संकेत है। हमारे शास्त्रों में लिखा है 'कलौ चण्डीविनायकौ', कलियुग में चण्डी और विनायक ही मुख्य देवता हैं और वही लक्षण हम देख रहे हैं। अब आप लोग निश्चित जान लीजिये कि अवतार हो चुका है। परन्तु हाँ, इस युग में अवतार तो पिछड़ी जाति में ही होगा। कायस्थ और ब्राह्मण तो भूल जाइये,

होगा पिछड़ी जाति में ही। आज अगर उच्च जाति में अवतार होगा तो अधिकांश लोग उसकी बात नहीं सुनेंगे। बोलेंगे, ये ब्राह्मण लोग फिर घमण्ड का चर्खा चला रहे हैं। आज पिछड़ी जातियाँ मुखर होती जा रही हैं। मैं किसी जाति विशेष का पक्षधर नहीं हूँ, मैं यथार्थ बात बोलता हूँ। अखबार की तरह बोल देता हूँ आपको। ये जातियाँ मुखर हो रही हैं। हजारों साल तक इनका डी.एन.ए. दबाया गया था, पर अब उनका डी.एन.ए., उनकी प्रतिभा प्रस्फुटित हो रही है। बहुत कुशाग्र और प्रतिभाशाली लोग निकलेंगे इनमें।

लेकिन कहा गया है कि भगवान अवतार लेंगे तो ब्राह्मण के यहाँ लेंगे।

हाँ, ऐसे बहुत उल्लेख हैं। अनेक नाम आये हैं, हर पुराण में अलग-अलग हैं, पर अब उन चीजों को समझना बहुत मुश्किल है। सच में देखा जाये तो फिर ब्राह्मण की भी परिभाषा हमें तय करनी पड़ेगी। ब्राह्मण किसी जाति को कहते हैं या गुण को कहते हैं या यह कोई योग्यता है? आखिर ब्राह्मण शब्द मूलत: ब्रह्म से निकलता है—जो ब्रह्म को जाने सो ब्राह्मण। 'ण' प्रत्यय ज्ञान से संबंध रखता है और ब्रह्म का मतलब होता है वेद। प्राचीन काल से ब्रह्म शब्द वेदों से तात्पर्य रखता आया है। उस समय तीन वेद थे तो त्रिवेदी तीन वेद को जानने वाला था। तीन वेद को जो जाने उसकी उपाधि है ब्राह्मण। चार वेद हुये, चतुर्वेदी हुये तो चार वेदों को जो जाने वह ब्राह्मण। और केवल वेद ही नहीं, उसे संहिताओं, उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, अरण्य ग्रन्थों का, श्रुति और स्मृति दोनों का ज्ञान हो तो वह ब्राह्मण होगा। तो ब्राह्मण यहाँ पर योग्यता हो गई, यह जातिगत तो रहा नहीं। यदि ब्राह्मण की यह परिभाषा मानी जाए कि वह वेदों का ज्ञाता है, तब तो वह जाति तक सीमित नहीं रहा। कोई भी वेदों का पण्डित हो तो वह ब्राह्मण ही है।

शास्त्रों में दो शब्दों का इस्तेमाल किया गया है, ब्रह्मश्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ। अब ब्राह्मण को दो भागों में बाँटा है। जिसको वेदों का सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त हो गया हो, उसे प्रोफेसर कहिये। वह जानता है, बातचीत कर सकता है, सब उपनिषदों के बारे में बोल सकता है, सिखा-पढ़ा सकता है, तर्क कर सकता है, वह हुआ ब्रह्मश्रोत्रिय। अब ब्रह्मनिष्ठ किसको कहते हैं? वेदों में जगह-जगह पर कहे हुए उस परम तत्त्व में जिसकी आत्मा टिक गई हो वह ब्रह्मनिष्ठ है, अर्थात् ब्रह्मनिष्ठ वह है जिसने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है। जो आदमी वेदों का पण्डित हो और वेदों में जो अध्यात्म ज्ञान है, उसका भी उसे अनुभव हो, अपरोक्ष अनुभूति हो वह ब्राह्मण है।

अब यदि यह ब्राह्मण की परिभाषा है तो तुम उसको जाति की सीमा में बाँधकर मत रखो, जाति की सीमा से हटा दो। सर जॉन वुडराफ या मैक्समूलर, इन्होंने तो ब्राह्मण कुल में जन्म नहीं लिया। ऐसे अनेक नाम बता सकते हैं जिन्होंने वेदों और उपनिषदों पर टीकाएँ लिखी हैं। एनी बेसेन्ट, लेडबीटर या कर्नल ऑलकॉट

ने किस ब्राह्मण घर में जन्म लिया था? मगर वे ब्राह्मण थे। यहाँ पर ब्राह्मण की परिभाषा उदार होनी चाहिये, संकीर्ण नहीं।

परमात्मा आखिर कहाँ उतरेंगे? कमल तो कीचड़ से ही उठता है न? उसी प्रकार अवतार रूपी कमल कीचड़ से भी निकल सकता है। अब सवाल यह उठता है कि जिन जातियों को हम पिछड़ी जातियाँ कहते हैं उनमें दोष क्या हैं? बल्कि दोष तो समाज के उच्च वर्गों में देख सकते हैं। हमारे चारों ओर कोई बड़ी जाति के लोग नहीं हैं, मजदूर हैं, चमार हैं, रमानी इत्यादि हैं। पर नियम के पक्के हैं, रीतियों में पक्के हैं। उन्नीस-बीस भी मुश्किल है यहाँ। सामाजिक व्यवस्था में कहीं गलती हो गई तो समझौता नहीं करते हैं। यहाँ पिछड़ी जातियों में उन्नीस-बीस का भी समझौता सम्भव नहीं है। विवाह की मर्यादाएँ, त्याग की मर्यादाएँ, शील की मर्यादाएँ, बहुत-सी मर्यादाएँ हमने देखीं जो अनुकरणीय हैं। आप लोगों ने भी अनुभव किया होगा। फिर किसी आदमी को जाति के बल पर क्यों परखते हो? मनुष्य को उसके गुणों से परखा जाता है। अगर वह आदमी गुणी है और यदि उसने मेहतर या निषाद कुल में जन्म लिया है तो उसको फेंक दोगे क्या? अगर तुम्हारा यही दर्शन है तो हम उसको स्वीकार नहीं करते हैं। कल अगर तुम्हारी हीरे की अंगूठी टॉयलेट में गिर जाये तो फ्लश कर दोगे क्या? जैसे तुम उसको फ्लश आउट नहीं करते हो, उसी तरह से समाज में गुणी आदमी को फ्लश आउट नहीं करना चाहिये। और कलियुग में भगवान वहीं जन्म लेंगे।

अब भगवान का अवतार होगा तो वह सन्देह भक्ति को खत्म करने के लिये होगा?

हाँ, मनुष्य के मन में भगवान के प्रति सच्ची भक्ति जागे, क्योंकि कलियुग की महिमा त्याग, तप, ब्रह्मचर्य या यज्ञ नहीं है। कलियुग में केवल दो बातों का महत्त्व है, जिसे सब धर्मों ने एक स्वर में स्वीकार किया है—भगवान के प्रति अटल भक्ति और दूसरे व्यक्ति की थोड़ी मदद। तीसरा रास्ता नहीं है। योगासन-प्राणायाम तो हम लोग करते हैं समय व्यतीत करने के लिए। नहीं तो मन में बड़ी अपराध की भावना रहती है, कुछ नहीं किया, कुछ नहीं किया। इन विधियों से कुछ होता नहीं जी। चाहे दस घण्टे ध्यान में बैठो, पर यह मनवा बात मानेगा नहीं। कुत्ते की

पूँछ कभी सीधी होने वाली नहीं है। भजन, पूजन, आसन, प्राणायाम, नादयोग जो भी करना है जरूर करो, वह केवल समय व्यतीत करने के लिये है, अपने मन के अपराध भाव को हटाने के लिये है। असली चीज है भगवान के प्रति भक्ति।

मैं पूजा-पाठ की बात नहीं बोल रहा हूँ, श्रद्धा की बात कर रहा हूँ। मान लो मैंने अपने पिता को नहीं देखा। जब मैं माँ के गर्भ में था तभी मेरे पिताजी की मृत्यु हो गई। मेरी माँ कहे कि तुम्हारे पिता थे तो मुझे सन्देह होगा क्या? नहीं होगा। उसको कहते हैं सहज श्रद्धा, अटूट श्रद्धा।

इसमें कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं। एक तो यह कि सारे जीवन के निर्देशक ईश्वर हैं। सब कुछ उनके अधीन है। सब कुछ वही करते हैं। ईश्वर को ही अपना मुख्य सूत्रधार मानना। यह अभी इन्सान नहीं कर रहा है क्योंकि उसके दिमाग में पुरुषार्थ नाम की जंग चढ़ी हुई है। उसमें अहंकार है। मनुष्य को केवल भक्ति के प्रति जाग्रत करने के लिये, उसके श्रद्धा-विश्वास को जगाने के लिये ही ईश्वर का जन्म होगा। श्रद्धा-विश्वास ही तीसरी आँख है। उसके बिना भगवान अगर तुम्हारे पॉकेट में भी हों तो तुम्हें पता नहीं चलता है। पॉकेट में हाथ डालते भी हो तो तुम्हारे हाथ में ही नहीं आते हैं क्योंकि श्रद्धा-विश्वास नहीं है। तुलसीदास जी ने भी कहा है–

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्॥

अपने अन्दर छिपे हुये ईश्वर को सिद्ध लोग भी नहीं देख सकते हैं। उन्हें देखने के लिये श्रद्धा और विश्वास जरूरी हैं, जो शिव और पार्वती के प्रतीक हैं। उस श्रद्धा और विश्वास को जगाने के लिये भगवान का अवतार इस युग में संभव है। ऐसा नहीं सोचना कि सब भ्रष्ट मन्त्रियों को मारने के लिये आ रहे हैं, या अमेरिका को दण्ड देने के लिये आ रहे हैं, या पाकिस्तान को दण्ड देने के लिए आ रहे हैं। वह सब नहीं होगा। इस कलियुग में भगवान की महिमा केवल भक्ति को जाग्रत करके सन्देह रूपी राक्षस को नष्ट करने के लिये होगी। यदि आपका सन्देह नष्ट हो जाए, मेरा सन्देह नष्ट हो जाए और जीवन भक्तिमय हो जाए तो हमारा जीवन तो परम आनन्दमय हो जायेगा।

अभी भगवान में हमारी श्रद्धा नहीं है। जितना महत्त्व हम पैसे को देते हैं उतना भगवान को नहीं देते। बल्कि भगवान की पूजा भी पैसे के लिये करते हैं। भगवान की पूजा आखिर क्यों करते हो? अर्थ और काम के हेतु। मन्दिर जाते हो अर्थ और काम के हेतु। सन्त-महात्मा का चेला बनते हैं, तीर्थ यात्रा, दान-धर्म क्यों करते हैं? अर्थ और काम के हेतु। अर्थ और काम ही हमारे जीवन का हेतु है जबकि वास्तव में हमारा हेतु होना चाहिये भक्ति।

–24 मार्च 1998, रिखियापीठ

योगनिद्रा का चेतना पर सूक्ष्म प्रभाव

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हम अपने मन एवं इन्द्रियों को, अपनी मानसिक तरंगों को किस तरह से समन्वय में ला सकते हैं? जिस प्रकार बिजली की तारों में दो विपरीत करेन्ट प्रवाहित होते रहते हैं, उसी प्रकार हमारे मन में भी दो विपरीत प्रकार की ऊर्जा-शक्तियाँ प्रवाहित होती रहती हैं। इनमें जब सन्तुलन और समन्वयता नहीं रहती तब तनाव एवं अशान्ति की उत्पत्ति होती है। इनमें एक को चित्तशक्ति और दूसरी को प्राणशक्ति कहते हैं। प्राणशक्ति को हमलोग 'वायटल एनर्जी' के नाम से जानते हैं। यह प्राणशक्ति हमेशा शरीर में विद्यमान रहती है, लेकिन उसके प्रवाह में कहीं-कहीं अवरोध भी हो जाता है। प्राणों के प्रवाह के इन अवरोधों को दूर करने का एक तरीका है।

योगनिद्रा एक ऐसी विधि है जिसका विभिन्न बीमारियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। योगनिद्रा का प्रभाव उच्च एवं निम्न रक्तचाप में होता है, साथ ही मधुमेह, दमा, हृदय रोग आदि में भी होता है। कहने का मतलब यह कि योगनिद्रा का प्रभाव किसी-न-किसी रूप में सभी बीमारियों में होता है। लेकिन इसका प्रभाव हमारे मन-मस्तिष्क पर क्या होगा, यह हम लोगों को आज जानना है।

मस्तिष्क में मुख्यत: चार प्रकार की तरंगें हैं जिन्हें अल्फा, बीटा, थीटा और डेल्टा के नाम से जाना जाता है। योगनिद्रा के अभ्यास के समय जैसे-जैसे मनुष्य अचेतन मन में प्रवेश करते जाता है वैसे-वैसे उसके शरीर के जितने भी कार्य हैं उनमें विश्रान्ति की स्थिति आने लगती है। मांसपेशियाँ तनावरहित होती जाती हैं और मानसिक व्याधियाँ एवं तनाव कम होते जाते हैं। किर्लियन फोटोग्राफी के द्वारा देखा गया है कि जो प्राणशक्ति हम लोगों के अन्दर विद्यमान है उसमें तथा मस्तिष्कीय तरंगों में सन्तुलन लाया जा सकता है। ई.ई.जी. आदि मशीनों द्वारा तरंगों में अनेकानेक परिवर्तन देखे गये हैं। हमलोग योगनिद्रा की अवस्था में अपनी कल्पनाशक्ति को विकसित कर अपने विचारों, भावनाओं, ग्रन्थियों और मस्तिष्कीय तरंगों में परिवर्तन लाकर उन्हें निश्चित रूप से सन्तुलित कर सकते हैं और परिणामस्वरूप अपने मन पर भी नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं।

इस सम्बन्ध में एक घटना याद आ रही है। ऑस्ट्रेलिया में एक बहुत प्रसिद्ध डॉक्टर थे, जिनके पास दमा से पीड़ित एक लड़का इलाज हेतु आया। डॉक्टर के मन में विचार आया कि उसके ऊपर कुछ दवाइयों का प्रयोग करके देखना चाहिए। उसने लड़के को पहले तो रोग निदान हेतु खूब दवाइयाँ दीं, लेकिन उससे दमा कम नहीं हुआ। उसके मन की जो विक्षिप्त स्थिति थी, भय की भावना थी वह भी दूर नहीं हुई। हाँ, थोड़ा सा लाभ अवश्य हुआ, लेकिन वह पूरी तरह से ठीक नहीं हो पाया।

अब डॉक्टर ने उस लड़के को दवाई खिलाना बन्द कर दिया और कुछ योगाभ्यास कराने शुरू कर दिये। अभ्यास करते-करते क्रमशः लड़के के दमा में कुछ सुधार परिलक्षित हुआ। उसने अभ्यास को नियमित रूप से जारी रखा और अन्त में उसका रोग पूर्णतः समाप्त हो गया। इस प्रयोग से यह पता चलता है कि पहले दवाइयों के प्रयोग ने उस लड़के की भावनात्मक तरंगों को थोड़ा-सा दबा दिया था, उसके सेन्सरी सिस्टम को मन्द और क्षतिग्रस्त कर दिया था, परन्तु नियमित और उपयुक्त योगाभ्यास के द्वारा जब उस लड़के की भावनाएँ, विचार और मन एक शान्त स्थिति में आये तो दमा रोग स्वतः ठीक हो गया।

हमलोगों के मन में निरन्तर विचारों की शृंखलाएँ चलती रहती हैं। हमारा मन उल्टा और सीधा दोनों तरफ चलता है। जाग्रत अवस्था में हम लोग जो कुछ देखते, सुनते, सोचते या काम-काज करते हैं उसकी जानकारियाँ अन्दर जाती रहती हैं और संस्कार रूप में मन के कई स्तरों में जमती रहती हैं। ये प्रभाव स्वप्नावस्था में बाहर निकलते हैं और हमारे चेतन स्तर पर प्रत्यक्ष होते हैं। स्वप्न है क्या? जब कोई घटना मन पर गहरी छाप छोड़ जाती है अथवा स्मृतिपटल पर अंकित हो जाती है तो यही स्मृति कालान्तर में हमारे मानस-पटल पर स्वप्नावस्था में प्रकट होती है। योगनिद्रा हमारे मानसिक धरातल पर छिपे इन्हीं अचेतन संस्कारों का नाश करने में हमारी मदद करती है।

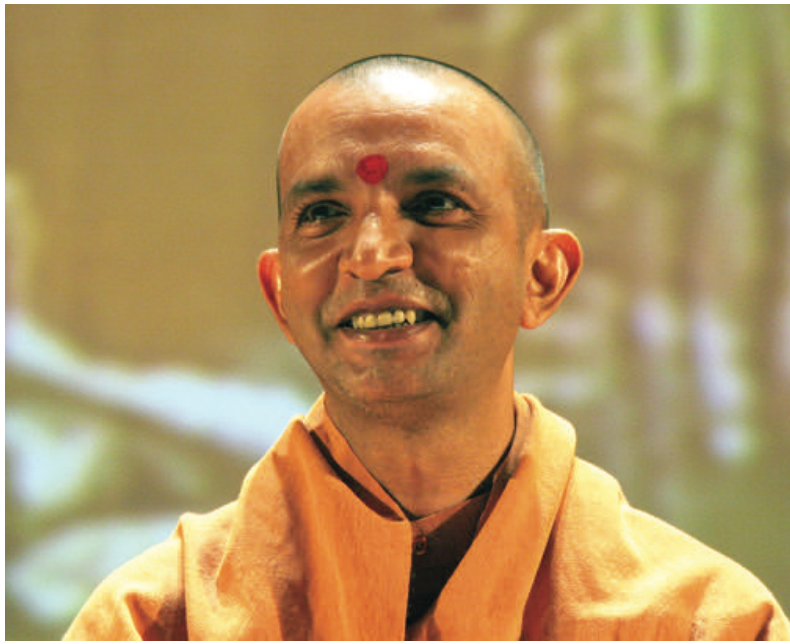

योगनिद्रा में क्या होता है? योगनिद्रा के माध्यम से हमलोग व्यक्ति को विश्राम की स्थिति में लाकर उसके मन की सम्पूर्ण क्रिया-प्रणाली को बदलने की कोशिश करते हैं जो उसकी अशान्ति का कारण होती है। मुंगेर में तो ऐसे बहुत-से लोग आ चुके हैं जिन्होंने योगनिद्रा के माध्यम से तरह-तरह की मानसिक और असाध्य बीमारियों को दूर किया है। मुझे अभी ऐसे ही एक व्यक्ति के बारे में याद आ रही है। वह हमारे मुंगेर आश्रम में आया था और उसे हमने पूज्य गुरुदेव के निर्देशानुसार रोज योगनिद्रा कराना प्रारम्भ किया। पहले दिन तो कुछ खास अन्तर नहीं हुआ। दूसरे, तीसरे और चौथे दिन भी कुछ प्रभाव नहीं हुआ। मगर पाँचवें दिन अचानक उसको मानसिक झटका लगा, और दिन में कई बार वह एक घटना को सुनाने लगा। वह कहता था, 'जब मैं सो रहा था तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ मानो मुझे बिस्तर में बाँधकर कोई मेरे पैरों को काट रहा था।' इसका मतलब इस घटना की छाप उसके मन में बहुत पहले से थी और सम्भवत: यही उसके आन्तरिक तनाव का कारण थी।

वस्तुत: उसकी इस अनुभूति के पीछे जो रहस्य था वह बड़ा ही रोचक है। हुआ यह था कि एक दिन वह एक शल्यचिकित्सक के पास गया था। संयोगवश वे डॉक्टर उस समय ऑपरेशन में व्यस्त थे। उसने वहाँ देखा कि वे ऑपरेशन थियेटर में एक रोगी के रोगग्रस्त अंगों की चीरफाड़ करने के बाद पुन: बन्द करने हेतु उसमें टांकें लगा रहे हैं। यह देखकर उस व्यक्ति के मन में यह भय हो गया कि 'कहीं मुझे भी ऐसा ही न भोगना पड़े' और इसी भय के कारण उसके मन में तनाव होने लगा था। यही उसकी बीमारी थी। इसके लिए उसने कितनी नींद की गोलियाँ लीं, कुछ फायदा नहीं हुआ, क्योंकि वह भय एक भावना के रूप में उसके मन के अन्दर था। योगनिद्रा के द्वारा जब उसको आन्तरिक शान्ति मिली और जब उसकी ये भावनाएँ ऊपर आईं तब उसको पता चला कि वस्तुत: मुझे कोई मानसिक तनाव या गड़बड़ी नहीं है। यह तो मात्र एक भय था जो मेरे अन्दर जमा था और उसी भय के कारण मैं पन्द्रह साल बीमार और विक्षिप्त रहा।

इस प्रकार अनेकानेक वैज्ञानिक अनुसंधानों में यह देखा गया है कि जैसे-जैसे हमलोगों के मन, भावना और विचारों में तनाव और असन्तुलन होता है, वैसे-वैसे मस्तिष्कीय तरंगों में भी परिवर्तन होता है और हमारे चिकित्सक उसे दवाइयों से राहत दिलाना चाहते हैं। अत्यधिक औषधि सेवन से अंगों, ग्रन्थियों और मस्तिष्कीय कार्य-प्रणाली में व्यवधान उत्पन्न हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप आन्तरिक तनाव और मनो-शारीरिक बीमारियाँ भयंकर रूप धारण कर सकती हैं। अतएव योगनिद्रा के अभ्यास द्वारा मन की गहराई में उतर कर बीमारी के कारणों का पता लगाना चाहिए। वास्तव में अधिकतर बीमारियों की जड़ विचार, भावना और स्मृति के रूप में अचेतन मस्तिष्क में विद्यमान रहती है जिसे ध्यान एवं योगनिद्रा के गहन अभ्यास से पूर्णत: समाप्त कर व्यक्ति को नवीन जीवन प्रदान किया जा सकता है।

अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018 के संस्मरण

21 जून 2018 को चतुर्थ अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के सफल आयोजन के पश्चात् 23 जून को गंगा दर्शन में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें इस दिवस की सफलता में योगदान देने वाले शिक्षकों, प्रदर्शकों तथा शिविर आयोजकों को आमंत्रित किया गया था। यहाँ उनके संस्मरणों के कुछ अंश प्रस्तुत हैं–

मैं अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के दिन इन्स्ट्रक्टर के रूप में भोला भगत जी के यहाँ गई थी। वहाँ पहुँची तो वहाँ पर कोई भी नहीं था। फिर अंकल जी बाहर आये और कहा कि आइये-आइये स्वामीजी बैठिये। हमने सोचा, 'अरे वाह, हमें स्वामीजी कहा!' मैं वहाँ कुछ देर बैठी क्योंकि समय से बहुत पहले ही पहुँच गई थी। फिर लोगों का जब आना शुरू हुआ तो वहाँ पर जगह ही नहीं मिल रही थी बैठने के लिये। वहाँ पर लेडीज़ लोग घुस-घुसकर ऐसे बैठने लगीं कि वहाँ पर मेरी जो डेमोंस्ट्रेटर राधिका थी, उस बेचारी को जगह नहीं मिली, उसको साइड में करना पड़ा!

फिर हमने अपनी आसन क्लास प्रारम्भ की। जब शवासन करने के लिये बोला और कहा कि हाथ छत की ओर रहेगा तो सबने हाथ ऊपर कर लिये! खैर हम आगे बड़े। हमने पूछा कि चक्की चालनासन यानि चक्की चलाना आता है सबको? वे बोले, नहीं स्वामीजी, हम तो चक्की नहीं, मिक्सी चलाते हैं! हम बोले कोई बात नहीं, अब हमलोग आपको चक्की चलाना सिखायेंगे। उन्हें बताना शुरू किया, फिर

तो उन लोगों को बहुत मजा आ रहा था करने में। इतना मजा आ रहा था कि वे पूछे ही नहीं कि इस आसन से क्या लाभ है। हमें लगा, हम इन्सट्रक्टर बनकर क्यों आये, हमसे कोई पूछ भी नहीं रहा है। फिर सोचा कि कोई नहीं पूछ रहा तो हम ही बता देते हैं। तब हमने बताया कि इससे क्या-क्या लाभ है। उसके बाद सबको यह भी बता दिया कि आप लोग आज यहाँ पर आसन कर तो रहे हैं, लेकिन आप संकल्प भी ले लीजिये कि आप लोग हमेशा करियेगा। सबने संकल्प लिया, करीब 40-45 लोग रहे होंगे। सब लोगों को बहुत मजा आया। फिर वहाँ पर अंकल ने मेरी बढ़ाई भी की कि स्वामीजी बहुत अच्छा करवा रहे थे, बहुत मजा आया। हम तो इतने खुश थे, इतना मजा आया कि कुछ कहने की बात नहा, और हम पूरा आप लोगों को बता भी नहीं पा रहे कि हम कितने खुश थे उस दिन। बस इतना सा ही, हरिः ॐ।

– अदिति कुमारी, बाल योग मित्र मंडल

मैं मुंगेर विश्वविद्यालय के आर.डी. एण्ड डी.जे. कॉलेज में योग कार्यक्रम करने के लिये गया था। वहाँ मुंगेर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आने वाले सभी कॉलेजों के विद्यार्थियों के लिए त्रिदिवसीय योग का कार्यक्रम रखा गया था। दो दिन तो सामान्य रूप से कक्षाएँ चलीं जिनमें लगभग पचास विद्यार्थी उपस्थित हुए, पर अन्तिम दिन सारे कॉलेजों के विद्यार्थी और साथ ही एन.सी.सी. के कैडेट, प्रोफेसर और अन्य लोग उपस्थित हुये। अन्दर जगह नहीं मिलने पर बाहर भी लोग सुनकर आसन और प्राणायाम का अभ्यास कर रहे थे। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में विश्वविद्यालय के कुलपति, प्रोफेसर रंजीत कुमार वर्मा उपस्थित थे। इसके अलावा सारे कॉलेज प्राचार्य एवं अध्यापक उपस्थित हुए। सब को बहुत आनन्द की प्राप्ति हुई और योग विषय के बारे में बहुत लोगों को उत्सुकता भी थी, वे चाहते थे कि मैं इसके बारे में विस्तृत जानकारी दूँ। इस हेतु योग की कक्षा समाप्त होने के पश्चात् वहाँ दो घंटे का वर्कशौप रखा गया जिसका संचालन स्वयं कुलपति ने किया। मैं स्वामीजी के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करना चाहूँगा कि योग प्रचार के ऐसे अवसर मुझे मिलते हैं और जहाँ भी जाता हूँ वहाँ उनके कारण ही मान-सम्मान मिलता है।

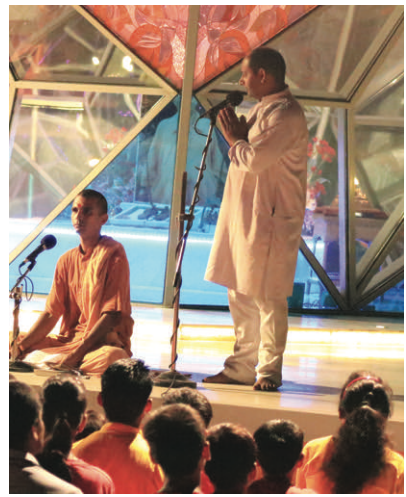

– साकेत, युवा योग मित्र मंडल

योग दिवस पर मैं संग्रामपुर गई, वहाँ सैकड़ों की संख्या में पुरुष और महिलायें इतने अनुशासित होकर सहज भाव से योग सीख कर चले गए, आश्चर्य है! यह बिना स्वामीजी की कृपा के संभव नहीं है। सच कहूँ तो मुझे इतना विश्वास नहीं था कि सुबह-सुबह सब महिलाएँ अपने घर का सब काम-काज छोड़कर योगाभ्यास करने आयेंगी। पर जब मैं क्लास के लिये गई तो देखा कि स्कूल की बड़ी-छोटी छात्राएँ सैकड़ों की संख्या में आईं और बड़े ही उत्साह से आसन कर रही थीं। कोई हड़बड़ी भी नहीं, बड़े आराम से योग सीखा उन महिलाओं ने। मुझे कुछ भी असुविधा नहीं हुई। क्लास जब समाप्त हुई तो उन लोगों ने अपने प्रश्न पूछे। जिसको भी कोई जिज्ञासा थी मैंने अपनी जानकारी के अनुसार सबको बताया। सभी महिलाएँ योगनिद्रा की प्रशंसा भी कर रही थीं। एक शांत-सी खुशी उनके मुख-मण्डल पर थी। सभी बड़े उत्साहित और खुश थे। संग्रामपुर की जनता योग, आश्रम और स्वामीजी के प्रति बड़ी श्रद्धालु है। सभी ने बहुत आदर-सत्कार किया, स्वामीजी को आभार व्यक्त किया और वे लोग चाहते हैं कि इस तरीके की योग कक्षाएँ वहाँ हमेशा आयोजित होती रहें जिससे वे इसका लाभ उठा सकें।

– शिप्रा, रामायण मंडली

सबसे पहले हम अपने दादा गुरु, स्वामी शिवानन्द जी, अपने गुरु, स्वामी सत्यानन्द जी और परमहंस निरंजनानन्द जी के चरणों में बार-बार नमन करते हैं, जिन्होंने मानव जीवन का वास्तविक प्रारूप हम लोगों के सामने स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है। गाँव-गाँव, नगर-नगर, डगर-डगर, घर-छत-आँगन सभी जगह पर्चा के द्वारा, हमारे बाल योग मित्र मंडल एवं युवा योग मित्र मंडल के सदस्यों द्वारा और हमारे संन्यासियों के द्वारा हर व्यक्ति के पास योग का संदेश पहुँच गया है। सब लोग इससे अवगत हैं, इसमें कहीं कोई संदेह की बात नहीं है। मैं अपने आपको गौरवान्वित

समझता हूँ कि हमें इस मुंगेर नगरी में गुरुजी का सान्निध्य उपलब्ध हुआ और यह नगरी आज अगर पूरे विश्व में योग नगरी के नाम से पहचानी जाती है तो गुरुजी के मिशन के कारण।

हमारे दादा गुरुजी ने पहले ही देख लिया कि आने वाला आधुनिक समय बहुत भयावह है। जिस तरह से अभी मई-जून की लू और धूप में आदमी झुलस जाते हैं वैसे ही मानव समाज भविष्य में झुलस जायेगा। इस ख्याल से उन्होंने हमारे गुरुदेव का आदेश दिया था कि पूरे विश्व में घर-घर तक तुम योग पहुँचा दो। हमारे गुरुदेव ने इस आदेश का पालन करते हुए सन् 1963 में मुंगेर आकर बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। जब उन्होंने पूरे विश्व में योग का झंडा गाड़ दिया तब इस योग आंदोलन का दायित्व हमारे स्वामीजी पर सौंप दिया। स्वामीजी हमलोगों को आसन-प्राणायाम ही नहीं कराते हैं। पहले हमको चलने के लिये, बोलने के लिये अनुशासन देते हैं। कहाँ चप्पल रखा जाता है, कैसे बोला जाता है, कैसे खाया जाता है, कैसे सोया जाता है, यम-नियम का, आहार-प्रत्याहार का ज्ञान देते हैं, यही सबसे बड़ा योग है। और इसके बाद हमारे गाँव-समाज में जो अव्यवस्थित, अज्ञानी व्यक्ति हैं, उन्हें आप लोगों के माध्यम से मार्गदर्शन दिलाते हैं। इससे बढ़कर हम अपने सौभाग्य को क्या समझेगें! हम तो यही कहते हैं कि हे गुरुदेव! आपकी हमारे ऊपर कृपा बनी रहे, हम बार-बार जनम लें और आपके चरणों का दास बने रहें।

– श्रीहरि, शिविर आयोजक, मुंगेर

योग कैप्सूल के अनुभव

गंगा दर्शन में 18 से 24 फरवरी तक श्वसन सम्बन्धी समस्याओं तथा गठिया एवं जोड़ों सम्बन्धी समस्याओं के लिए योग कैप्सूल सत्र संचालित किए गए। इनमें सम्मिलित कुछ प्रतिभागियों के अनुभव यहाँ उद्धृत किए जा रहे हैं–

अंगराज कर्ण की कर्मभूमि और स्वामी सत्यानन्द की तपोभूमि, मुंगेर भारतवर्ष का एक विश्व विख्यात स्थल है, जहाँ की एक छोटी-सी पहाड़ी को सुन्दर संरचना प्रदान की गई है। आश्रम के गेट से अन्दर प्रवेश करते ही हम बाहर की दुनिया भूल जाते हैं, मानो हम स्वर्ग की आबो-हवा में जी रहे हैं। आश्रम को जीवन्त बनाती है यहाँ की कार्य प्रणाली जो वैदिक रीति से संचालित है एवं जीवन में उच्च आदर्शों का आचरण करने को प्रेरित करती है। संन्यासियों का जिम्मेदारीपूर्ण सेवाभाव आश्रम का मेरुदण्ड है। उनका प्रयास हमें स्वस्थ शरीर और शुद्ध मन वाला बनाता है। स्वस्थ व्यक्ति स्वस्थ परिवार बनाता है और तत्पश्चात् सवस्थ परिवार स्वस्थ और सुदृढ़ समाज की संरचना करता है। आश्रम जीवन के एक सप्ताह बीतने पर हमने अनुभव किया कि–

- बैठने का सही तरीका रीढ़ की हड्डी को सीधा रखना है।
- उठने का सही वक्त ब्रह्ममुहूर्त है, सोने का सही वक्त 9 बजे रात्रि है।
- रात्रि भोजन का सही वक्त संध्या 5 बजे है, सुबह नाश्ते का समय 6.30 बजे है।
- हमारी वैदिक संस्कृति की एक झलक इतनी सुन्दर है तो सम्पूर्ण वैदिक पद्धति कितनी विलक्षण होगी।
- वैदिक वाङ्मय का परिचय मंत्र और प्रार्थना के रूप में हुआ।
- योगाभ्यास में नियमित रहकर जीवनपर्यन्त सुखमय जीवनयापन के गुर हमने सीखे हैं।
- यहाँ का कर्मयोग गृहस्थ जीवनोपयोगी लगा।
- सभी स्वामी मृदु, सरल एवं सम्यक भाषी हैं। धन्य हैं वे लोग जिन्होंने अपना जीवन दान देकर आश्रम को सींचा है, पुष्पित-पल्लवित किया है और अन्ततः समाज के लिए अनुकरणीय बनाया है।
- अनवरत मंत्र जाप, स्तुति पाठ, भजन कीर्तन से आश्रम का सम्पूर्ण माहौल घनात्मक ऊर्जा से ओत-प्रोत है।
- आश्रम में शिष्टाचार की भावना सभी स्तर पर समान रूप से लागू है, व्यवहार्य है।
- मौन के अभ्यास से ऊर्जा का संचय महसूस होता है। मोबाइल का प्रयोग नहीं करने से मन शांत है।

- एक कमरे में अन्य व्यक्तियों के साथ रहने से आपसी तालमेल बेहतर रहा।
- सुन्दरकाण्ड का इतना सुनियोजित, एक साथ, एक स्वर में लयबद्ध पाठ भाव-विभोर करता रहा है।

शिक्षकों ने योगाभ्यास के क्रम में अच्छे उदाहरण एवं प्रेरक प्रसंग भी बतलाये जिन्होंने कक्षा को ज्ञानवर्धक के साथ-साथ रुचिकर एवं स्मरणीय बनाया। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को कोटिश: नमन कि उन्होंने बिहार की धरती पर योग का बीज बोया जो अब फलदायी होकर देश-परदेश को जीवन की उत्तम दिशा का निर्देशन कर रहा है। आश्रम की प्रशंसा मात्र से मेरा फर्ज पूरा नहीं होता है, ईश्वर हमें सामर्थ्य दे कि हम आश्रम की मजबूती की दिशा में कार्य कर सकें।

– सुधीर कुमार, पटना (योग कैप्सूल– गठिया)

मेरी कमर में दर्द पाँच सालों से है, यहाँ आने के बाद योग करने से मेरा दर्द कम हुआ है और शान्ति की अनुभूति हुई है। आश्रम में कर्मयोग का अनुभव बहुत अच्छा रहा, आश्रम की स्वच्छता और शान्त माहौल इतना आकर्षक है कि बार-बार यहाँ आने का मन होता है। मैंने अपने जीवन में कभी सुन्दरकाण्ड नहीं पढ़ा था, पर यहाँ रोज सुन्दरकाण्ड का जो पाठ होता है, वह बहुत ही अच्छा लगा।

– रूबी कुमारी, पटना (योग कैप्सूल– गठिया)

योग कैप्सूल के दौरान मेरा अनुभव अच्छा रहा। मेरा वजन थोड़ा ज्यादा है जिससे मुझे आसन के दौरान थोड़ी परेशानी हुई। अपने शिक्षक के कथनानुसार मैंने भोजन को धीरे-धीरे महसूस करके खाया तो भोजन खाना भी कम हुआ और दुगुना आनन्द आया। अब योग करने में मजा आने लगा। हाँ, साँस लेने और छोड़ने के क्रम में थोड़ी परेशानी जरूर है। योगाभ्यासों की कई आवृत्तियाँ करने से हमें यह पता चला कि श्वास को छोड़ने में तकलीफ ही हमारे दमे का एक प्रमुख लक्षण है और हठयोग द्वारा श्वास लेने और छोड़ने की क्रिया को अच्छी तरह ठीक कर सकते हैं। प्राणायाम से कई अंत:सुख प्राप्त होते हैं। नाड़ीशोधन प्राणायाम से हम श्वास लेने और छोड़ने की समय-सीमा को बढ़ाते हैं जो दमे को नियंत्रण में रखता है। सुन्दरकाण्ड में मैंने लयबद्ध तरीके से पाठ करना सीखा। यहाँ के नाश्ते, भोजन तथा रात्रि भोजन की तुलना नहीं की जा सकती। सभी बहुत रुचिकर होने के साथ स्वास्थ्यवर्द्धक भी हैं। योगनिद्रा में अच्छा अनुभव हुआ। आश्रम का अनुशासन भी मुझे बहुत अच्छा लगा। शाम का संध्या भजन भी बहुत आनन्ददायी है। जीवन में सजग रहना मैंने यही से सीखा। मुझे ऐसा लगता है कि अगर मैं ऐसे संतुलित जीवन को एक महीने तक पूर्ण सजगता के साथ जी लूँ तो मुझे दमा या कोई अन्य बीमारी छू नहीं सकती।

– सुपर्णा सिन्हा, भागलपुर (योग कैप्सूल– श्वसन)

मैं साँस ठीक से न ले पाने की समस्या से विगत दस वर्षों से पीड़ित था तथा इसके निजात के लिए कई दवाएँ भी ले रहा था। यहाँ मुझे इस समस्या के उत्पन्न होने के संभावित कारण तथा निदान के लिए योगाभ्यास के तरीके बहुत ही अच्छे ढंग से बताये गए। मैंने कक्षाओं में सभी निर्देशों को मनोयोग से सुना तथा पालन किया। फेफड़ों को खोलने और पूर्ण सजगता से साँस लेने का तरीका सीखा, जिसके लाभ का अनुभव प्रथम दिन से ही हुआ। श्वास के प्रति मेरी सजगता बिल्कुल

कम थी तथा इसकी महत्ता को कभी ठीक से समझ नहीं पाया था। कक्षाओं में सिखाई गई विधियों से विगत सात दिनों में श्वास-प्रश्वास के प्रति मेरी सजगता काफी बढ़ी है, जो अब तक के जीवन में कभी नहीं हुआ था। मैं अब स्वाभाविक रूप से ही पूरे दिन में यौगिक श्वसन करने लगा हूँ और आनंदित महसूस कर रहा हूँ। सूर्य नमस्कार के अभ्यास से शारीरिक स्फूर्ति का अनुभव कर रहा हूँ जैसा बचपन के दिनों में होता था। इसके अलावा राजयोग की कक्षा, मंत्रोच्चारण से दिन की शुरुआत, सुन्दरकाण्ड का पाठ, सायंकाल में भक्ति और ज्ञानयोग के सान्निध्य से जीवन में बेहद शांति आई और आध्यात्मिक प्रवृत्ति बढ़ी है। आश्रम आने के पूर्व मेरा विभिन्न व्यक्तियों के साथ रहने या सामंजस्य बिठाने का ज्यादा अनुभव भी नहीं था, पर यहाँ मैंने यह भी सीखा है। आश्रम के अनुशासनमय अनुभव को मैं अपने व्यक्तिगत जीवन में उतारने का पूरा प्रयास करूँगा और अपने जीवन को गुणवत्तापूर्ण बनाऊँगा।

– लालकृष्ण, राँची (योग कैप्सूल– श्वसन)

योग कैप्सूल प्रशिक्षण में शामिल होने पर मुझे कई लाभ एवं अनुभव प्राप्त हुए। पहले की तुलना में मुझे थकान कम आ रही है। नींद भी अच्छी आ रही है। भूख खुल कर लग रही है। मानसिक प्रसन्नता में वृद्धि हुई है, काम-काज में मन लग रहा है। सजगता की वृद्धि हुई है। संध्याकालीन भजन-कीर्तन का कार्यक्रम बहुत अच्छा लगा। सुन्दरकाण्ड का पाठ बहुत रोचक रहा, आध्यात्मिक रुचि बढ़ी है। दैनिक योग अभ्यास एवं ध्यान की कक्षा से मुझे बहुत लाभ हुआ है। शरीर में विशेष रूप से लचीलापन, ताजगी एवं स्फूर्ति का अनुभव प्राप्त हुआ। आश्रम के शान्त एवं आध्यात्मिक वातावरण में रहकर मन प्रसन्न एवं तनावमुक्त है। देखते-देखते एक सप्ताह कैसे पार हो गया पता ही नहीं चला।

– संतोष कुमार पाण्डेय, जमशेदपुर (योग कैप्सूल– श्वसन)

इस सत्र में आकर मैंने सीखा कि जीवन को आनन्द एवं शांतिपूर्वक कैसे जीया जा सकता है। बिहार योग विद्यालय में कदम रखने से पहले तक मेरे अन्दर सिगरेट पीने का व्यसन था। पहले दिन थोड़ी तकलीफ हुई, उसके बाद मेरे दिमाग एवं दिल से यह पूरी तरह हट चुका है और मुझे ऐसा लग रहा है कि अब मैं इस व्यसन से मुक्त हो रहा हूँ। पेट में कब्ज की समस्या भी गंभीर थी जिससे मन शांत नहीं रहता था। तीन दिन के बाद से इसमें काफी सुधार हुआ है। दिन में सुन्दरकाण्ड के पाठ एवं शाम के भजन-कीर्तन से मन प्रफुल्लित हो रहा है। शरीर में ऊर्जा एवं प्राण का नया संचार हो रहा है और फेफड़ा पूरी तरह सक्रिय लग रहा है।

– सुशील कुमार, पटना (योग कैप्सूल– श्वसन)

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

आकाश का तारा, धरती का फूल

पृष्ठ 40

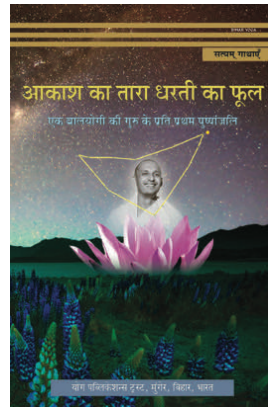

उपलब्ध

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती तथा श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को समर्पित सत्यम् गाथाएँ उनकी आध्यात्मिक एवं यौगिक शिक्षाओं को सरल, रोचक ढंग से दुनियाभर के लोगों तक पहुँचाने का माध्यम हैं।

'वैसे तो मेरा जीवन ही स्वामी जी के संस्मरण, साक्षात्कार तथा स्मृति से ओत-प्रोत है, लेकिन मैं सत्यम् रूपी समुद्र में गोते लगाकर ऐसे अनमोल रत्नों का संग्रह करूँगा, जिसके प्रकाश में आप सब कुछ पाने में सफल होंगे ...' अपने इस हार्दिक उद्‌गार को चरितार्थ करते हुए स्वामी निरंजन ने दश वर्ष की अल्पावस्था में यह पुष्पांजलि रचकर पूज्य स्वामी जी के चरणों में समर्पित कर दी। सन् 1971 में प्रकाशित स्वामी निरंजन की यह पहली पुस्तक, समर्थ गुरु और आदर्श शिष्य के प्रेरक प्रसंगों तथा संवादों का मर्मस्पर्शी संकलन है, जिसे अब एक सत्यम् गाथा के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें–

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 91-6344-222430, 6344-228603 फैक्स : 91-6344-220169

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा।

वेबसाइट और एप्प

SATYANANDA YOGA BIHAR YOGA

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर सत्यानन्द योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

www.satyamyogaprasad.net वेबसाइट पर तथा Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में उपलब्ध

मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर स्वामी सत्यानन्द जी एवं स्वामी निरंजनानन्द जी की समस्त प्रकाशित कृतियाँ ऑनलाइन प्रस्तुत की जा रही हैं।

बिहार योग विकी

www.yogawiki.org

मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर ऑनलाइन विश्वकोश प्रस्तुत किया जा रहा है जहाँ सभी साधकों के लिए यौगिक शिक्षाएँ सुगम रूप में उपलब्ध होंगी।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, *ए.पी.एम.बी.* अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है।
- *बिहार योग एप्प* साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है।

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2017
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2019

जून 2-6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अगस्त 16-22	राज योग यात्रा 1 एवं 2
अगस्त 23-29	राज योग यात्रा 3 एवं 4
अक्टूबर 1-30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण 1, 2 (अंग्रेजी)
अक्टूबर 1- जनवरी 25	चातुर्मासिक योग अध्ययन (अंग्रेजी)
नवम्बर 4-10	क्रिया योग यात्रा 1 एवं 2
नवम्बर 11-17	क्रिया योग यात्रा 3
दिसम्बर 18-22	योग चक्र शृंखला (अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

आश्रम में मोबाइल फोन लाना वर्जित है। अपना मोबाइल फोन कदापि अपने साथ न लाएँ।

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें-
बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
फोन : 06344-222430, 06344-228603 फैक्स : 06344-220169
वेबसाइट : www.biharyoga.net **कार्यक्रमों एवं प्रशिक्षणों के आवेदन-पत्र यहाँ उपलब्ध हैं**
✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।